वर्ष : 17, अंक : 3-4 सयुक्तांक अक्टूबर 2018 से मार्च 2019 मूल्य 20/-

RNI No.MPHIN/2002/07269

रघुकलश

सामाजिक पत्रिका

रघुवंशी समाज के सभी बंधुओं को रामनवमीं और हनुमान जंयती की हार्दिक शुभकामनाएँ एवं बधाई

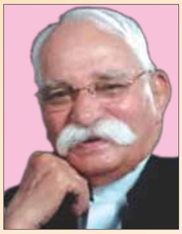
हजारीलाल रघुवंशी
अध्यक्ष

पी.एस.रघु
कार्यकारी अध्यक्ष

चौ. चन्द्रभान सिंह
उपाध्यक्ष

उमाशंकर रघुवंशी
महासचिव

शिववरण सिंह रघुवंशी
कोषाध्यक्ष

अजय सिंह रघुवंशी
प्रदेश अध्यक्ष

चौधरी सुजीत मेर सिंह
विधायक

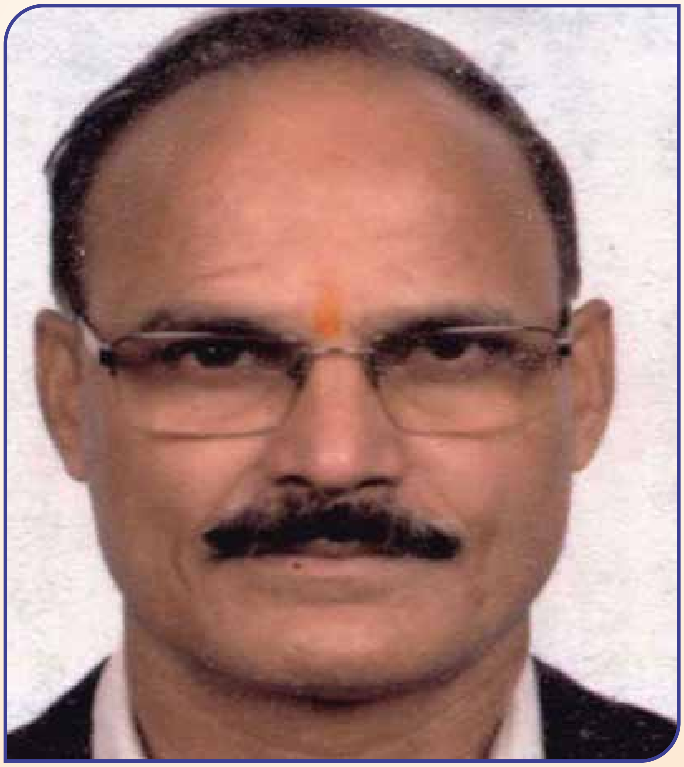

वीरेन्द्र रघुवंशी
विधायक

कैलाश रघुवंशी

जिला अध्यक्ष, विदिशा

सौजन्य : अखिल भारतीय रघुवंशी (क्षत्रिय) महासभा, जिला विदिशा

रघुकलश

त्रैमासिक सामाजिक पत्रिका

RNI No. MPHIN/2002/07269

वर्ष : 17, अंक : 3-4 सयुक्तांक अक्टूबर 2018 से मार्च 2019 मूल्य 20/-

संपादक की कलम से

बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेइ

आदमी का यह स्वभाव है कि वह अतीत से यानी बीते हुए समय से चिपका रहना चाहता है और उसे याद कर या तो दुखी होता है या फिर खुशी से भर जाता है, लेकिन वह उसे भुलाना नहीं चाहता। यह एक ऐसी स्थिति है जो आदमी को जड़ बना देती है और वह बीते सपनों की यादों में इस कदर खो जाता है कि आगे क्या करना है इस ओर उसका ध्यान नहीं जा पाता। हर आदमी का भूतकाल होता है और भूतकाल से सबक लेते हुए यदि वह वर्तमान में जीता है और भविष्य के सपनों को साकार करने में समय गुजारता है तो इससे उसे अधिक फायदा होगा न कि पुरानी यादों में खोया रहने से। यदि हम भूतकाल को गुजर जाने दें यानी उसे बिसरा दें और आगे हम जो प्रगति करना चाहते हैं उस पर ही समूचा ध्यान केंद्रित रखें तो अधिक अच्छा रहेगा। शायद इन्हीं हालातों के लिए यह कहावत है कि -बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेइ- यानी जो बीत चुका है उसे छोड़ो अब आगे क्या करना है इसकी परवाह करो, क्योंकि जो बीत चुका है वह वापस आने वाला नहीं है, अब चिंता इस बात की होना चाहिए कि जो आगे का पथ है उसे कैसे सुगम बनाया जाए और इस समय का सदुपयोग प्रगति के नये सोपान गढ़ने के लिए किस ढंग से किया जाए।

यह सच है कि जब तक हम अतीत की आदतों और विश्वासों से पिण्ड नहीं छुड़ा लेते तब तक तेजी से आगे बढ़ने की न तो अधिक गुंजाइश रहती है और न ही कोई बहुत अधिक आशा की किरण नजर आती है। वैसे जैसी मानव स्वभाव की प्रकृति है उसे देखते हुए भूतकाल को भूल जाना और सोचते रहने की आदत को छोड़ देना सचमुच बहुत कठिन है, साधारणतः इसके लिए बहुत ही कठिन तपस्या की जरुरत होती है। ऐसी परिस्थितियों में हम जो कुछ कर रहे हैं वह यह मानकर करें कि हम अपने प्रयासों को भगवान को समर्पित कर रहे हैं और यदि हमारे मन में भगवान की कृपा पर श्रद्धा है तो फिर हम हृदय की गहराइयों से यदि भगवान को पुकारते हैं तो अधिक आसानी से परिस्थितियों पर विजय पाने की सामर्थ्य अपने आप में महसूस करने लगेंगे। ईश्वर आस्था की वस्तु है और आस्था से हमें एक नई शक्ति मिलती है। जीवन में अनेक ऐसे अनोखे क्षण आते हैं जो किसी सुखद सुनहरे स्वप्न की तरह गुजर जाते हैं और ऐसा समय पंख लगे होने की तरह गुजर जाता प्रतीत होता है। इसलिए जब उन्हें पंख लगते हैं तभी पकड़ लेना चाहिए अन्यथा वे कभी लौटकर वापस नहीं आयेंगे।

शेष पेज 12 पर

राष्ट्रीय अध्यक्ष की कलम से

राम के आदर्शों के सहारे पायें सार्थकता

हर व्यक्ति की जिसने भी मानव जीवन लिया है यह चाहत होती है कि उसका जीवन सफल व सार्थक बनें और दूसरों के लिए मार्गदर्शन का काम करे। हमें इस बात का गौरव है कि हम भगवान श्रीराम के वंशज है और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम न केवल रघुवंश के बल्कि समूची मानव जाति के आदर्श पुरुष हैं। उनके आदर्शों को अपने जीवन में उतार कर ही हम सार्थकता दे सकते हैं। उनके बताये पथ पर चलकर ही एक आदर्श जीवन कैसे जिया जा सकता है इसकी प्रेरणा हमें मिलती है। हमें यदि निरन्तर आगे बढ़ना है और लगातार अपने खाते में उपलब्धियों को संचित करना है तो इसे साकार करने का एकमात्र रास्ता भगवान श्रीराम के बताये मार्ग पर चलना ही होगा। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा चरित रामचरित मानस एक ऐसा सार्थक व प्रेरणादायी ग्रंथ है जिसमें जीवन के हर पहलू का बड़ा ही स्पष्ट प्रतिबिम्ब देखने को मिलता है, इसके अध्ययन से यह बात हमारे सामने दिन के उजाले की तरह साफ हो जाती है कि आखिर हमें प्रभु राम को आदर्श मानते हुए अपने जीवन में किस ढंग से आगे बढ़ना है और क्या करना है। समाज में जो कुछ भी घटित हो रहा है उसके पीछे क्या है इसका अच्छा ज्ञान व दर्शन हमें रामचरित मानस में ही देखने को मिलता है, केवल आवश्यकता इस बात की है कि हम उसे सही अर्थों व संदर्भों में समझने व अपने आप में अंगीकार करें।

स्वयं के हित और स्वार्थ के मकड़जाल से बाहर निकलकर यदि हम कुछ कर पाते हैं तो फिर हम एक आदर्श जीवन जी सकेंगे और हमें भगवान राम के सही वंशज कहलाने का अधिकार होगा। यदि हम यह नहीं कर पाये और स्वयं के हित व स्वार्थों के मकड़जाल में उलझे रहे तो फिर हमें अपने आपको राम का वंशज कहलाने का कोई हक नहीं होगा। यदि हम भगवान के वंशज होने के हकदार बनना चाहते हैं तो हमें मर्यादा में रहना होगा। भगवान राम ने जो मार्ग हमें बताये हैं उन पर आगे बढ़ना होगा। हमें यह स्वीकार करना होगा कि समय के साथ ही साथ हमारे समाज में कुछ कुरीतियां भी घर कर गयी हैं जिनसे हमें पूरी ताकत से लड़ना होगा। दिखावे के लिए शान-शौकत करना व फिजूलखर्ची की आदत से हमें बचना होगा। दहेज प्रथा, मृत्यु भोज जैसी कुप्रथाओं को छोड़ना होगा। जिस प्रकार रघुवंशी समाज सोहागपुर जिला होशंगाबाद ने निर्णय करते हुए मृत्युभोज न देने की शुरुआत की है यह अपने आप में अनुकरणीय है और समाज को इसका अनुकरण करना चाहिये। हमें यह बात निरन्तर ध्यान में रखना चाहिए कि मानव जीवन हमें किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मिला है और यदि उसे भूल कर केवल भोग-लिप्सा, पदलिप्सा, स्वार्थ व शारीरिक भोग विलास तक सीमित कर लेते हैं तो यह निश्चित तौर पर अधोपतन की ओर बढ़ना होगा। हमें यह याद रखना चाहिए कि हमारे जीवन का वास्तविक उद्देश्य केवल भोग-विलास व सुख-सुविधाएं प्राप्त करना नहीं है बल्कि दूसरों के प्रति सदभाव, दूसरों के कल्याण के लिए कार्य करना मनुष्य जीवन का आधार है, यही हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए।

भगवान श्रीराम ने अपने जीवन में अनेक कष्ट उठाए। यह सब उन्होंने दूसरों के दुख और तकलीफें दूर करने के लिए सहे ताकि वे लोग अधिक से अधिक निर्भय होकर सुख व सुविधापूर्ण जीवन जी सकें। सबका कल्याण हो, छोटों को कैसे ऊपर उठाया जाए इन सबके कारण भगवान राम स्वयं कष्ट सहते रहे और वन-वन भटकते रहे। दूसरों की सुख-शांति के लिए ही उन्होंने अपने जीवन में कष्ट सहे। वास्तव में मनुष्य जीवन का उद्देश्य सबका हित, सबका कल्याण और सबकी सुविधा के लिए कार्य करना है और यही जीवन की सफलता और ख्याति का मूलमंत्र है।

हजारीलाल रघुवंशी
राष्ट्रीय अध्यक्ष
अखिल भारतीय रघुवंशी (क्षत्रिय) महासभा

सुमिरन का सांस्कृतिक महत्व

मनोज कुमार श्रीवास्तव

सुमिरन का सांस्कृतिक महत्व भी कम नहीं है। सूर कहते थे कि- हरि हरि हरि सुमिरन करौ/हरि चरनारविंद उर धरौं। कबीर की सलाह थी कि ''सुमिरन लगन लगाय के मुख से कछु ना बोले रे।'' कबीर तो स्मरण की क्वालिटी पर भी बात करते हैं। 'माला तो कर में फिरै जीभ फिरे मुख मांही/मनु आतरे चहु दिसि फिरै यह तो सुमिरन नाहीं।'' और यह भी कि- दुख में सुमिरन सब करैं सुख में करै न कोय।' कबीर तो कहते थे कि मन को सुमिरन में ऐसे लगायें जैसे दीपक से पतंगा लगाता है। वह निडर होकर क्षण भर में जल जाता है, लेकिन पीछे नहीं हटता, सुमिरनसों मन लाइए जैसे दीप पतंग/प्राण तजे छिन एक में जरत न मोरे अंग। गुरु ग्रंथ साहिब में कहा गया-सुमिरन के बिना व्यक्ति उस सर्प की तरह है जिसकी व्यर्थ में ही जीने वाली बहुत लम्बी आयु होती है। इसी प्रकार परमात्मा से टूटा हुआ व्यक्ति प्रभु-नाम को भुलाकर व्यर्थ में जीता चला जाता है। जो एक क्षण के लिए भी सुमिरन में लगा वह समझो लाखों करोड़ों दिनों तक शान्त हो गया। सुमिरन के बिना किए गए काम धिक्कार योग्य हैं। प्रभु का सुमिरन सबसे ऊंचा है और सुमिरन के माध्यम से ही अनेकों का उद्धार हो गया है। प्रभु के सुमिरन से तृष्णा समाप्त हो जाती है और व्यक्ति को सब कुछ सुझाई देने लगता है। प्रभु के सुमिरन से यम का भय नहीं रहता और आशाएं पूरी हो जाती हैं। प्रभु के सुमिरन से मन की मैल छूट जाती है। कबीर की टेक-'मन रे राम सुमिरि, राम सुमिरि, राम सुमिर भाई/राम नाम सुमिरन बिनै बूड़त है अधिकाई। कबीर का यह भी कहना था कि काठ की माला गले में डालकर हे मूढ़ क्यों उसे झुलाते हो। मन में सुमिरन की शुद्धता है नहीं, जैसे गले में काठ डालकर गाय छोड़ दी जाती है, वैसी ही तुम्हारी स्थिति है। तुम भी काठ की माला डालकर इधर-उधर मांगते खाते हो : कबीर माला, काठ की, ली मुगध झुलाई/सुमिरन की सोधी नहीं। उनका कहना था कि सुमिरन इस तरह करना चाहिए जैसे गौ वन में घास चरती हुई भी बछड़े को सदा याद रखती है, जैसे कंगाल अपने पैसे का पल-पल में सम्हाल करता है, जैसे हिरण प्राण दे देता है, परन्तु वीणा का स्वर को नहीं भूलना चाहता है, जैसे कीड़ा अपने आपको भुलाकर भ्रमण के स्मरण में उसी के रंग का बन जाता है और जैसे मछली जल से बिछुड़ने पर प्राण-त्याग कर देती है, परन्तु उसे भूलती नहीं। 'सुमिरन की सुधि यों करो ज्यों सुरभी सुत मॉहि/कह कबीर चारों चरत, बिसरत कबहू नॉहि/बिसरे नहीं पल-पल लेत सम्हाल/सुमिरन सो मन लाइये जैसे नाद कुरंग/कह कबीर बिसरै नहीं प्रान तजै तोहि संग/सुमिरन सों मन लाइये जैसे कीट भिरंग/कबीर बिसरे आपको होय जाय तेहि रंग/सुमिरन सों तन लाइए, जैसे पानी मीन/प्रान तजै पल बीछड़े संत कबीर कह दीन। कबीर तो स्मरण को कठिनाइयों से पार ले जाने वाला मानते हैं : कबीर कठिनाई खरी,सुमिरंता हरि नाम/सूली ऊपर नट विद्या, गिरुं न ताही ठाम। ज्यों डींगर घाली गई। सुमिरन से सुख होत है सुमिरन से दुख जाय/कह कबीर सुमिरन किये साई माहि समाय/सुमिरन की सुधियों करो ज्यों गागर पनिहारी/लाहैडो लै सुरति में, कहै कबीर बिचारी।' ''सुंदर'' को तो संसार की सारी व्याधियों का उपाय यही 'सुमिरन'नजर आता था : वैद्य हमारे रामजी, औषधि हू है राम/'सुंदर' यहै उपाय अब, सुमिरन आठों याम और स्मरण दर्शन में फलित भी होता है तो यही बात 'सुंदर'कवि कहता भी है : नारायण से नेह अति, सन्मुख सिरजनहार/परब्रह्म से प्रीतड़ी, 'सुंदर' सुमिरन सार।' 'सुंदर' कवि तो सुमिरन के आगे मन्सा वाचा कर्मणा ईश्वर को भी अधीन मानते थे। 'सुंदर' सुरति समेटि कैं, सुमिरन सौ लैं लीन/मन वच क्रम करि होत है, हरि ताके आधीन। सुमिरन को कवि 'दरिया' ने तो और भी ऊंचा प्रतिष्ठित किया।

'सकल कवित्त का अर्थ है सकल बात की बात/दरिया सुमिरन राम का कर लीजे दिन रात।' रैदास भी मन वचन कर्म की यही बात सुमिरन के सिलसिले में कहते हैं : 'साचा सुमिरन नाम बिसासा/मन बच कर्म कहै रैदासा।'' दादू के अनुसार तो चेतन आनंद मूल सुमिरन के सहारे ही प्रत्यक्ष होता है- 'साधौ सुरिमन सो' कह्या जिहि सुमिरण आपाभूल/दाद गहि गंभीर गुरु चेतन आनंद मूल।' हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं :'सन्तों ने जिसे सुमिरन कहा है वह वस्तुतः ध्यान का ही एक परिष्कृत रुप है। दशम ग्रंथ एक कदम और आगे बढ़कर मन्त्र, जाप और सुमिरन है।' सिर्फ निर्गुणी संत ही नहीं, सगुण धारा के भक्त भी 'सुमिरन' का महत्व जानते थे जैसे तुलसी का यही कथन या सूर 'तुम देखत हरि सुमिरन होइ/और प्रसंग चलै नहिं कोइ', कहते हैं 'बिना सोच सुमिरन क्यों होइ/आज्ञा होइ करौं अब सोइ' भी कहते हैं और 'आयु भग्न घट जल ज्यों छीजैअह निसि हरि हरि सुमिरन कीलै।' बल्कि १७वीं सदी की एक कृति में तो निर्गुण और सगुण को एक साथ तोलते हुए कहा गया कि

सुमिरन गोरख गोविंद पाया/निराकार मिलि बहुरि न आया/दत्त दिगम्बर सुमिरन लागे/है लीन आदि वे जागे/सुमिरन सेस सहसमुख भीना/सुमिरन थे निहचल कीना। रजब कहते थे : रजब सुमिरण महिला, माला रहित सु होई/पंच पचीसी त्रिगुण मन विरला फेरे कोई।

सुमिरन के साथ भजन की भी बात थी। मन के साथ वचन की। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा : 'चतुर्विद्या भजन्ते मां जना : सुकृतिनोऽर्जुन/आर्त्तो जिज्ञासुरर्थी ज्ञानी च भरतर्षभः' चार तरह से भगवान के भक्त उन्हें भजते हैं। स्मरण भजन से ही पूर्णता पाता है। विद्वानों का कहना है- 'कोई भी स्मरण अन्तःकरण से उद्‌भव पाते ही जब तक 'परा' वाणी द्वारा पश्यन्ति में नहीं आता, तब तक वह भासमान नहीं हो सकता। रामचन्द्र शुक्ल कहते थे : कीर्तन भगवान के अनंत सौंदर्य, अनन्त शक्ति और अखंड शील की सर्वसाधारण के बीच रसमयी घोषणा है। कीर्तन भक्त के द्वारा भगवान के रुप, लीला और गुणों की आत्मानुभूति की संगीतमय अभिव्यक्ति है। उसके दो रुप होते हैं : व्यष्टि कीर्तन और समष्टि कीर्तन। भक्त जब स्वान्तः सुखाय भावावेश की अवस्था में कर्तन गाता है तो वह व्यष्टि कीर्तन है और जब कीर्तन के माध्यम से जनसमुदाय में सामूहिक भावानुभूति को जगाने की कोशिश होती है तब समष्टि कीर्तन होता है। पापों को समूल नष्ट करने की इच्छा वालों के लिए पूर्ण प्रायश्चित भगवान कस गुणानुवाद ही माना गया है क्योंकि इससे चित्त शुद्ध हो जाता है :नैकांतिकं तद्धि कृतेअपि निस्कृते मनः पुनर्धावति चेदसत्पथे/तत्कर्मनिहरिमभीप्सतां हरेर्गुणानुवाद : खलु सत्यभावनः। शास्त्र यह भी कह रहे हैं : 'यत्फलं नास्ति तपसा न योगेने समाधिना/तत्फलं लभते सम्यकलोके केशवकीर्तनात्।' कि कलियुग में कीर्तन आदि का विशेष महत्व है क्योंकि अन्य युगों में जो फल तप योग समाधि द्वारा कठिनाई से मिलता है, वह कलियुग में केवल हरिकीर्तन से मिल जाता है। भागवत में आगे यह भी कहा गया है : श्रद्धवा तत्कथायां च कीर्तनेर्गुणकर्मणाम् : नामदेव कहते हैं : गुणसागर गोविंद गुण जाइ। कबीर जैसे तत्कथित निर्गुण कवि कहते हैं : 'रमइया गुन गाइअे रे जाते पाइये परम निधानु। 'और यह भी कि 'ऐसे लोगनि सों का कहिए/के नर भए भगति तें बाहर तिनतें सदा डराने रहिए। हरि जस सुनहि न हरि गुन गावहिं/बातन ही असमानु गिरावहि।' कि हर गुण न गाने वाले लोगों के बारे में क्या कहे? वे कहते हैं : 'कबीर सूता क्या करे, गुण गोविन्द के गाइ' और यह कि 'हरि जैसा है तैसा रहे तूं हरषि गुण गाई।' और यह भी कि 'निर्मल निर्मल हरिनगुन गावै सो भाई मेरे मनि भावै।' कबीर यही तो कहते हैं कि केशव कहकर रात दिन पुकारते रहने से कभी तो भगवान सुनेगा ही। 'कसौ कहि कहि कूकिये ना सोइये असरार/राति दिवस के कूकणे, मति कबहूं लगे पुकार।' मीरा भी तो यही कहतीं : 'माई म्हॉ गोविन्द गुण गास्यां/मीरा रे प्रभु गिरधर नागर गुण गावॉं सुख पास्यॉं।' और 'मीरा मगन भई हरि के गुण गाय। और 'मीरा' के प्रभु गिरधर नागर, भजन बिना नर फीको।' कबीर को खेद था कि 'बीत गए दिन भजन बिना रे/.......कहत कबीर सुनौ भई साधो/पार उतर गये संत जना रे/और यह भी कि -दिन वान मन भजन बिना, दुख पैहों।' एक निमाड़ी लोकगीत कहता है : 'काया नहीं रे सुहाणी भजन बिन' रैदास कहते थे : नामु तेरो आरती भजनु मुरारे/हरि के नाम बिनु झूठे सगल पसारे।' राम का यही तो व्रत है : वचन कर्म मन मोरि गति भजनु करहि निःकाम/तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा विश्राम।

अरण्यकांड में भक्तियोग पर राम लक्ष्मण को इन्हीं शब्दों से सम्बोधित करते हैं और सीता तो वही हैं, उसी निकष की- 'वचन काय मन मम गति जाहि।। सुग्रीव की किष्किंधा कांड में यही तो मांग है : 'अब प्रभु कृपा करहु एहि/सव तजि भजनु करौं दिन राती।' उत्तरकांड में भी यही कथा-निष्कर्ष निकल के आया है- ऑव छॉह कर मानस पूजा/तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा। बाद में धर्म-रथ की अपनी व्याख्या में तुलसी के राम ईश भजन को रथ के सारथी के रुप में पदाभिषिक्त करते हैं।

रजनीश से जब एक बार पूछा गया कि भजन और ध्यान में क्या भेद है तो उन्होंने कहा : 'ध्यान है भजन की निष्क्रिय अवस्था और भजन है ध्यान की सक्रिय अवस्था। जब भजन मौन में होता है तो ध्यान और ब ध्यान मुखर में होता है त ो भजन। जैसे नील नदी मीलों तक जमीन के नीचे बहती है, जब तक जमीन के नीचे बहती है तब तक ध्यान और जब प्रकट होकर जमीन के ऊपर बहने लगती है तब भजन। ध्यान है शुद्ध आत्मा और भजन है जब आत्मा देह लेती है। ध्यान है निराकर, भजन है निराकर का आकार में प्रकट होना, रुप में प्रकट होना, रंग में प्रकट होना.....पुरुष है ध्यान, स्त्री है भजन। बुद्ध शुद्धतम ध्यान के प्रतीह हैं और मीरा शुद्धतम भजन का। ऐसा मत समझ लेना कि पुरुष भजन नहीं कर सकते क्योंकि चैतन्य भी उसी जगह पहुंच जाते हैं जहां मीरा....... और ऐसी स्त्रियां भी हुईं जो ध्यान में पहुंची जैसे कश्मीर की लल्ला य सूफी फकीर राबिया..... भजन अभिव्यक्ति है, अभिव्यंजना है, गुंजार है, गीत की गुनगुनाहट है, पुखरता है। ध्यान चुप्पी है, सन्नाटा है, मौन है और एक बात याद रखना, जहां भजन होगा उसके पीछे छिपा ध्यान हमेशा होता है, नहीं तो भजन प्राण कहां से पायेगा? अगर मौन न होगा तो मुखरता कहां से आएगी? अगर भीतर शून्य न होगा तो शून्य की अभिव्यक्ति करने वाले गीत कहां से पैदा होंगे।

-सुंदरकांड एक पुर्नपाठ भाग ११ से साभार

सेतुबन्ध, सहयोग एवं शिवपूजा

डॉ.रामसुमन पाण्डेय

श्री हनुमान द्वारा सीता का संदेश सुनकर तथा उनके द्वारा पहचान के लिए भेजी चूड़ामणि हाथों में पाकर श्रीराम कुछ पल के लिए चेतनाशून्य हो गये। जब उनका मन कुछ स्थिर हुआ तब वे सीताजी के लिए विलाप करने लगे। उन्होंने कहा कि-लक्ष्मण! यह उत्तम चूड़ामणि विवाह के समय मेरे श्वसुर राजा जनक ने वैदेही को दिया था जो उनके मस्तक पर शोभा पाती थी। इसे देखकर मेरा मन द्रवीभूत हो रहा है तथा सीता के साथ मुझे अपने पूज्य पिताजी तथा महाराज जनक का मानो दर्शन एक साथ हो रहा है। यह मेरे लिए कितने दुर्भाग्य की बात है कि मैं इस मणि को अपनी प्रिया सीता से पृथक आज यहां दे रहा हूं। पवनकुमार! तुम बार-बार सीता द्वारा कहे हुए संदेश को मुझसे बताओ। इससे मुझे उसी तरह राहत मिलती है जिस प्रकार जल से विलग होकर तड़पती मछली को जल का छींटा देने पर उसे राहत मिलती है। सीता ने तो एक मास तक मेरी अनुपस्थिति में प्राण धारण करने को कहा है, पर मैं अब उसके वियोग में एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। हनुमन! तुम जहां मेरी यशस्विनी प्रिया सीता को देखकर आये हो उसी स्थान पर मुझे भी तुरन्त लेकर चलो। अब मैं यहां एक पल भी रुकना नहीं चाहता। हनुमानजी ने श्रीराम की इस विकलता को देखकर करबद्ध कर विनत हो निवेदन किया कि-प्रभु! माँ सीता आपके लिए प्रतिपल लालायित और आकुल हैं। एक-एक लम्हा उनके लिए युगों का अन्तराल दे रहा है। उन्होंने बार-बार आपसे शीघ्र आने का अनुनय किया है। चित्रकूट में घटी इन्द्रपुत्र जयंत के आंख फोड़ने की तथा तिलक लगाने की घटना की याद दिलाकर आपको इस बात के लिए प्रेरित करने का अनुरोध किया है कि आप जितना शीघ्र हो सके रावण का परिजनों सहित संहार कर उनका उद्धार करें। प्रभो! मेरे मत में अब विलम्ब करने का काम नहीं है। हमें वहां के लिए अतिशीघ्र प्रस्थान कर देना चाहिए, क्योंकि दुरात्मा रावण ने उनके जीवन की अवधि मात्र एक माह ही निर्धारित कर रखी है। मैंने उन्हें पूर्ण सांत्वना दी है और विश्वास दिलाया है कि मेरा संदेश पाकर प्रभु श्रीराम तुरन्त लंका के लिए प्रस्थान करेंगे और अपने विषैले सायकों से राक्षसों को ग्रस कर आपको शोकमुक्त बना देंगे। देवी! आप निराश न हों और चिन्ता न करें। अब शीघ्र ही आप अपने कष्टों का अन्त देखेंगी। भगवन! मैंने सीता से यह भी निवेदन किया कि आप यदि चाहें तो मेरी पीठ पर बैठ जायें और मैं अभी इसी क्षण ले जाकर आपको श्रीराम से मिला दूं, पर उन्हांने मेरा यह प्रस्ताव यह कहकर अमान्य कर दिया कि मैं स्वेच्छापूर्वक किसी परपुरुष का स्पर्श नहीं कर सकती। मैं यह भी नहीं चाहती कि श्रीराम के अलावा अन्य कोई मेरा उद्धार करे। हनुमन! मेरी इच्छा है कि प्रभु श्रीराम वानरों की सेना के साथ आयें और अपने पराक्रम से रावण के कुल का नाश कर हमें ले जायें। हमें यह अच्छी तरह से विदित है कि समरांगण में प्रभु श्रीराम का सामना करने का साहस त्रैलोक्य में किसी के पास नहीं है, फिर इन राक्षसों की बिसात ही क्या है? अतः तुम जाकर वही प्रयत्न करो ताकि प्रभु श्रीराम शीघ्रआयें और अपने पराक्रम से हमारा उसी प्रकार उद्धार करें, जिस प्रकार भगवान विष्णु ने लक्ष्मी का उद्धार

रघुकलश के संभागीय ब्यूरो प्रमुख

सामाजिक बंधु रघुकलश में रचनाएं और सामाजिक समाचार, ग्राहक बनने एवं विज्ञापन के लिए संभागीय ब्यूरो प्रमुखों से संपर्क कर सकते हैं। उनके नाम और फोन नम्बर इस प्रकार हैं-

ग्वालियर-चंबल संभाग ब्यूरो प्रमुख : ओमवीर सिंह रघुवंशी, मो.09893247389, 09171582598

इंदौर ब्यूरो प्रमुख : राजेश रघुवंशी, मो. 09826578006, रणवीर सिंह रघुवंशी मो. 08959811503, 09522222841

उज्जैन ब्यूरो प्रमुख : चैन सिंह रघुवंशी, मो.09685574723

खानदेश ब्यूरो प्रमुख : डॉ. महेन्द्र जयपाल सिंह रघुवंशी, नंदूरबार महा. मो. 09423942750

विदर्भ ब्यूरो प्रमुख : दिलीप सिंह रघुवंशी, मो. 08485031185, 09960129404

धूलिया ब्यूरो प्रमुख : आलोक विजय सिंह रघुवंशी, धूलिया महा. मो. 09421991991

अकोला ब्यूरो प्रमुख: संजय रघुजीत सिंह रघुवंशी, मो. 09850509244

अहमदनगर ब्यूरो प्रमुख : पी.एम. रघुवंशी, मो. 09922079523, 09637081936

-हनुमन! मुझे तुम अच्छी तरह से आंखों देखी लंका की दशा का वर्णन करो कि उसमें कितने द्वार हैं, कितने यंत्र हैं एवं कितनी और कैसी राक्षस सेना है? लंका में प्रवेश कैसे और कहां से किया जा सकता है तथा युद्ध विषयक कार्यवाही किस प्रकार संभव है? वानरवीर! तुमने लंका में इन सब बातों का यदि सूक्ष्मता से निरीक्षण किया हो तो उसे यथार्थ रुप में प्रस्तुत करो। श्रीराम द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर हनुमानजी ने लंका संबंधी जानकारी इस प्रकार देना प्रारम्भ किया- प्रभु! जब इन्द्रजीत द्वारा मेरे ऊपर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया गया तो मैं एक क्षण के लिए चेतनाशून्य हो गया, किन्तु अगले ही क्षण ब्रह्माजी के वरदान और आपके अनुग्रह से मैं स्वस्थ हो गया और उस ब्रह्मपाश से मुक्त हो गया। किन्तु हमें लंका को अच्छी तरह से देखने की कामना थी, अतः मैं बन्ध में हूं इस तरह का व्यवहार करता रहा। जब राक्षस लोग रस्सी और सुतली से बांधकर मुझे दुरात्मा रावण के पास ले गये तो उसके पूछने पर मैंने अपने को आपका दूत बताकर रावण को सत्परामर्श दिया कि वह आपकी शरण ग्रहण करे, किन्तु रोष के वशीभूत उस निशाचर ने मुझे मृत्युदंड का आदेश दिया। परन्तु उसके धर्मात्मा भाई विभीषण ने दूत को अवध्य बताकर उस राजाज्ञा को संशोधित करने का अनुरोध किया, जिसे मानकर रावण ने मेरी पूंछ में आग लगाने और नगर में घुमाने का आदेश दिया। राक्षसों ने वैसा ही किया। मेरी पूंछ में वस्त्रादि लपेटकर उसे तेल से सिक्त किया और ''यह भेदिया है'' इस प्रकार का उद्घोष करते हुए मुझे लंका के चौराहों, सड़कों और गलियों में घुमाया गया। घूमते वक्त बारीकी के साथ मैंने लंका की आंतरिक दशा का निरीक्षण किया। लंका में चारों दिशाओं में चार बड़े-बड़े दरवाजे हैं जो बहुत ही मजबूत और बहुत ऊंचे हैं, जिनमें मोटे चद्दर वाले लोहे के फाटक लगे हैं तथा अर्गलायें हैं। सब प्रकार के आयुधों से सज्जित दस सहस्त्र दुर्जेय राक्षस जो सम्मुख युद्ध में भयंकर मार करने वाले हैं, लंका के पूर्वी द्वार पर पहरा देते हैं। दक्षिण द्वार पर इसी रह के दुर्धर्ष एवं रणकुशल राक्षस एक लाख की संख्या में नियत किये गये हैं। लंका के पश्चिमी द्वार पर लगभग दस लाख सैनिक तैनात हैं जहां से उन्हें शत्रुओं के आक्रमण की आशंका है, उत्तरी द्वार पर

किया था।

हनुमानजी की बात सुनकर भगवान श्रीराम अत्यन्त प्रसन्न हो गये और बोले कि- सुग्रीव! इस जगत में जिस प्रकार का बल, धैर्य और साहस की बुद्धि के साथ परिचय हनुमान ने दिया है तथा जिस प्रकार सीताजी की खोज का कार्य पूर्ण किया है, मैं इस वसुन्धरा पर किसी अन्य से ऐसे कार्य सम्पादित करने की कल्पना भी नहीं कर सकता। यह हनुमान का ही विक्रम है कि इस अपार महासागर को लांघ गये तथा जो तीनों लोकों के लिए दुर्जेय राक्षसराज रावण की राजधानी है जहां प्रवेश कर पाना देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व आदि सभी के लिए दुष्कर है, वहां न केवल प्रवेश किया वरन् सीताजी का पता लगाया, रावण की वाटिका का विध्वंस किया, उसके प्रतापी पुत्र का तथा मंत्रियों के पुत्रों व सेनापतियों का सेना सहित वध किया, लंका में आग लगा दी तथा अपने नाम का डंका बजा दिया। रावण जैसे अपराजेय शत्रु के सिर पर पांव रखकर सकुशल वापस भी आ गये। जो सेवक जिस कार्य के लिए नियुक्त होने पर योग्यता के साथ उसे पूरा करते हुए उससे सम्बद्ध अन्य कार्यों को भी अच्छी तरह से पूर्ण कर देता है वह सेवक सर्वोत्तम माना गया है। हनुमान ने अपने कार्यों से वह योग्यता दिखायी है जो सुग्रीव तथा मेरे व लक्ष्मण के हित की है तथा इन्होंने अपने कार्य से रघुवंशियों की भी रक्षा की है। मैं हनुमान का सदा उपकृत रहूंगा, क्योंकि मेरे पास इनको देने के लिए कोई भी उत्तम वस्तु प्राप्त नहीं है। ऐसा कहकर श्रीराम ने पुनः श्री हनुमान का प्रगाढ़ आलिंगन किया।

इसके बाद भगवान श्रीराम ने हनुमानजी से पूछा कि

लगभग दस करोड़ मतवाले सैनिकों का जमावड़ा है, जो सब प्रकार से युद्ध में कुशल तथा हाथी, रथ और अस्त्र-शस्त्रों से युक्त हैं। ये सैनिक युद्ध में बहुत बार अपनी वीरता के लिए पुरस्कृत किये जा चुके हैं। लंका के मध्य भाग में करोड़ों की संख्या में तैनात शूरवीर सैनिक उसकी रखवाली करते हैं। पूरी लंका सोने के सुदृढ़ परकोटे से घिरी है, जिसे तोड़ पाना सहज ही सरल नहीं है। परकोटे के नीचे चारों ओर अत्यन्त गहरी नीले जल की भयानक खाई है जो अत्यन्त विशालकाय मगरों एवं विषधर सर्पों से भरी हुई है। चारों दरवाजों पर पहुंचने के लिए खाइयों के ऊपर चार बड़े लकड़ी के पुल बने हैं। जब शत्रु की सेना उन पुलों पर पहुंचती है तो यंत्रों के सहारे शत्रुओं को उसी खाई में फेंक दिया जाता है, जहां वे भयानक ग्राहों के आहार बन जाते हैं। लंका चारों ओर गहरे समुद्र से घिरी है, जहां नाव से भी जाने में कठिनाई है, क्योंकि गंतव्य स्थल का ज्ञान पाना कठिन होता है। लंका के भीतर युद्ध के मतवाले हाथियों, उच्चकोटि के अश्वों, रथों तथा अस्त्र-शस्त्रों के भंडार बहुतायत में हैं तथा दुर्जेय राक्षसी सेना जो सदा चौकस रहती है, प्रचुर मात्रा में है। रावण, कुभकर्ण और मेघनाद- ये दुर्जेय योद्धा हैं, जो रणक्षेत्र में सदा उत्साहित बने रहते हैं तथा वहां अन्य असंख्य योद्धाओं की भी भरमार है।

यद्यपि लंका अत्यन्त भयावह गढ़ है, जो देवताओं के लिए भी दुर्जेय है, किन्तु हमने अकेले वहां की बहुत-सी सेनाओं का संहार कर दिया है, बहुत से अस्त्र-शस्त्रों का भंडार नष्ट कर दिया है, प्रमुख वीरों को मार दिया है व लंका को जला दिया है। यदि हम सब वानर वहां पहुंच जायें तो लंका को ध्वस्त कर देंगे, रावण को सकुल मारकर सीताजी को यहां ले आयेंगे। वैसे तो सारे वानरों को वहां जाने की जरुरत ही नहीं है यदि अंगद, द्विविद, मेन्द, जाम्बवान, पनस, नल और नील केवल इतने ही लोग लंका पहुंच जायें तो सारी पुरी को नष्ट कर राक्षसों को मारकर सीताजी को ला लेंगे। अतः प्रभु! अब विलम्ब करने की आवश्यकता नहीं है। एक माह का समय पल-पल में कटता-गुजरता जा रहा है। आप कृपा कर सैनिकों को प्रस्थान करने की आज्ञा दें और आगे बढ़ें। हनुमानजी की उत्साह से भरी बातें सुनकर श्रीराम जी बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने वानरराज सुग्रीव से सेना को प्रस्थान करने की आज्ञा देने को कहा।

जब श्रीराम चलने के लिए तत्पर हुए तब हनुमानजी ने निवेदन किया कि प्रभु! समुद्र काफी दूर है अतः आप मेरे कंधे पर विराज जायें ताकि आपको असुविधा न हो। भगवान राम ने तथास्तु कहा और हनुमान के कन्धे पर बैठ गये। लक्ष्मणजी युवराज अंगद के कन्धे पर बैठे और इस तरह उछलते-कूदते वह अपार वारिधि की तरह विशाल कपि सेना समुद्र की ही ओर बढ़ चली। विजय मुहूर्त में प्रस्थित हुयी यह विजययात्रा अखिल भुवन के स्वामी भगवान श्रीराम की थी, जिनके प्रस्थान करते ही सीताजी तथा राक्षसराज रावण की बायीं आंख फड़कने लगी। भगवान के आतिथ्य में अपनी सेवा समर्पित करने हेतु रास्ते भर में सभी वृक्ष फलों से लदे थे तथा वहां बहुतायत में मधु के छत्ते उपलब्ध थे। वे वानरवीर फलों को खाते, मधु पीते, गर्जते, उछलते आकाश में उड़ते तथा श्रीराम का जयघोष करते हुए आगे बढ़ रहे थे। पर्वतों के झरनों, नदियों व दृश्यों को देखते हुए फल-मूल खाते वे विशालकाय वीर वानर लाखों, करोड़ों, अरबों की संख्या में फैले हुए दक्षिण दिशा की सम्पूर्ण धरा को आच्छादित-सा किये, श्रीराम के विजय अभियान में बढ़ते हुए महेन्द्र पर्वत से उतरकर समुद्र के किनारे जा पहुंचे। समुद्र किनारे उतरकर श्रीराम ने हनुमान, लक्ष्मण व सुग्रीव से कहा कि आगे यह वरुणालय है, अतः हम अपनी सेना का पड़ाव यहीं डालेंगे। सभी सेनापति अपनी-अपनी सेना की सुरक्षा में मुस्तैद रहें क्योंकि राक्षसों के गुप्त आक्रमण की सम्भावनाओं को नकारा नहीं जा सकता।

यहां रुककर हम विचार करेंगे कि तरंगमालाओं के स्वामी इस महोदधि के पार किस उपाय से जाया जा सकता है। श्रीराम का आदेश पाकर वह अपार वानर सेना जो दूसरे समुद्र की ही तरह धरती पर फैली थी, उस समूचे प्रान्त को आच्छादित करती हुई रुक गयी। वानरों के उस विशाल समूह के कोलाहल से उस समय समुद्र की भी गर्जना धीमी पड़ गई। जब हनुमानजी सीता की खोज में लंगा गये थे उस समय भवनों में अनुसंधान करते हुए उनकी मुलाकात विभीषण से हुई थी। हनुमानजी ने विभीषण की रामभक्ति को देखा था-

राम-राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदय हरष कपि सज्जन चीन्हा।।

और विभीषण की इस शंका को कि-

तात कबहुं मोहिं जानि अनाथा। करहहिं कृपा भानुकुल नाथा।।

दूर किया था। हनुमानजी ने विभीषण को श्रीराम की शरण ग्रहण करने की सलाह दी थी। हनुमानजी ने कहा था कि आप तो प्रसिद्ध पुलस्त्य ऋषि के कुल में उत्पन्न हुए हैं तथा राजवंश को सुशोभित करते हैं, भला आपके शरण आने पर प्रभु श्रीराम आपको कैसे नहीं अपनायेंगे, जब वे हम जैसे साधारण कोटि के लोगों के भी संरक्षक हैं। कहां वानर जाति का मैं, जिसका प्रातःकाल नाम लेने पर वह दिन अशुभ हो जाता है और कहां श्री रघुनाथजी की अपार महिमा, पर जब उन्होंने हम जैसों पर भी कृपा की तो आपको तो निश्चय ही अभय प्रदान करेंगे। हनुमानजी ने कहा कि ऐसे परम दयालु और सर्वसमर्थ प्रभु को त्यागकर अन्यत्र भटकना ही सम्पूर्ण कष्टों का कारक है। इस तरह विभीषण के मन में श्रीराम की शरण ग्रहण करने की भावना हनुमानजी ने भर दी थी और विभीषण ने श्रीराम की शरण जाने का निश्चय कर रखा था।

म.प्र. जनसंपर्क के प्रकाशन
संकट मोचक हनुमान से साभार

ब्रह्मचारी और संगीत कोविद श्री हनुमान

अंजनीगर्भसम्भूतो वायुपुत्रो महाबलः।
कुमारो ब्रह्मचारी च हनुमन्ताय नमो नमः।।

छप्पय

दच्छिन दिशि तट उदधि करें वानर उपवासा।
संपाती सिय पतो दयो बाढ़ी हिय आसा।।
हनुमत सागर लांघि गये लंका सिय पाई।
सुरसा लंकिनि ताड़ि तोरि तरु लंक जराई।।

अति अद्भुत कारज कर्यो, प्रबल पराक्रम बिपुल बल।
कौन करि सकै काज तजि, वीर ब्रह्मचारी बिमल।।

संसार में ब्रह्मचर्य ही एक ऐसी महान शक्ति है जिसके द्वारा मनुष्य महान से महान कार्य कर सकता है। सच्चे ब्रह्मचारी के लिए कोई भी बात असंभव नहीं। मनुष्य की शक्ति जब इंद्रियों के माध्यम से सुख में व्यय होने लगती है तब वह संसार से ऊपर नहीं उठ सकता। हनुमानजी ब्रह्मचारियों के अग्रगण्य हैं। उन्होंने अपने ब्रह्मचर्य, शम, दम, त्याग, तितिक्षा, प्रज्ञा तथा विलक्षण बुद्धिकौशल से श्री रामचन्द्रजी को अपने वश में कर लिया। उन्होंने सीतान्वेषण के समय अपनी बुद्धिमत्ता का जैसा परिचय दिया उससे भगवान श्रीराम अत्यन्त ही प्रभावित हुए और वे सदा के लिए हनुमानजी के ही हो गये। उन्होंने तो यहां तक कह दिया कि 'हनुमान! मैं तुम्हारे ऋण से कभी उऋण ही नहीं हो सकता। मैं तो सदा तुम्हारा ऋणी ही बना रहूंगा।

यों तो ऋक्षराज जाम्बवान के स्मरण दिलाने पर हनुमानजी को अपनी शक्ति-सामर्थ्य का स्मरण हो आया। वे बोले- ''आप लोग मुझसे जो कराना चाहें वह करा सकते हैं। यह शतयोजन लम्बा समुद्र तो क्या, ऐसे सैकड़ों समुद्रों को मैं लांघ सकता हूं। रावण जी तो बात ही क्या मैं उसकी पूरी की पूरी लंका को उखाड़कर समुद्र में डुबा सकता हूं, रावण को मच्छर की भांति पकड़कर मसल सकता हूं। आप कहें तो मैं लंका को उखाड़कर यहीं ले आऊं? आप कहें तो मैं रावण को मारकर सीताजी को भी साथ लेता आऊं। आप कहें तो मैं रावण के पुत्र-पौत्र समस्त परिवार को भी श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में लाकर रख दूं।''

जाम्बवानजी ने देखा अब तो हनुमानजी आवश्यकता से अधिक उत्तेजित हो गये, तब उनको समझाते हुए वे बोले-''हनुमान! देखो हम तो भगवान के दूत हैं। दूतों को सदा मर्यादा में ही रहना चाहिये। दूतों के लिए युद्ध निषेध है। दूत लड़ाई-झगड़ा नहीं कर सकता। दूत की बात का राजा लोग बुरा भी नहीं मानते। उसे दंड का भी विधान नहीं, क्योंकि दूत जो भी कहता है, अपने स्वामी के अभिप्राय को ही प्रकट करता है, अतः तुम न तो रावण को मारना, न लंका को उखाड़ना, न किसी को ताड़ना देना और न कोई अन्य ही उपद्रव करना। तुम केवल इतना ही करना कि सीताजी का पता लेकर ज्यों के त्यों ही लौट आना। सीताजी का पता मिलते ही स्वयं भगवान राघवेन्द्र सेना सजाकर अपनी प्रिया का उद्धार करेंगे। यही उनकी कीर्ति प्रतिष्ठा के अनुरुप होगा। तुम तो अपने को श्रीरामजी का दूत ही समझना। समझ गये न मेरी बात?

हनुमानजी ने कहा- ''बूढ़े बाबा! आपकी बात मैं समझ गया। मैं सीताजी की सुधि लेकर शीघ्र ही लौट आऊंगा, किंतु मुझे कोई मारे-पीटे तो मैं उससे आत्मरक्षार्थ भी लड़ाई न करुं क्या? इस पर हंसकर जाम्बवान ने कहा- 'अरे भैया! अपनी रक्षा तो कर ही लेना। वैसे व्यर्थ में लड़ाई मत मोल लेना।' हनुमानजी ने कहा-'अच्छा, बहुत अच्छा, तो अब आप मुझे आज्ञा दीजिये।' यह कहकर हनुमानजी ने बड़ों के पैर छुए, बराबर वालों से मिले, छोटों ने उन्हें प्रणाम किया और वे कूदकर एक बड़े भारी वृक्ष पर चढ़ गये। अब उन्होंने अपने शरीर को बढ़ाना आरंभ किया। देखते ही देखते वे पर्वताकार हो गये। इतना भारी वृक्ष भी उनके भार को सहन करने में समर्थ न हुआ, वह टूट कर समुद्र में गिरने लगा। हनुमानजी उछलकर समुद्र में कूद पड़े। उनके साथ वृक्षों की सैकड़ों डालियां समुद्र में बहने लगीं। उन डालियों को अपनी छाती से तोड़ते-फोड़ते कपिराज आगे बढ़ने लगे। पता नहीं चलता था कि वे समुद्र में तैर रहे हैं या आकाश में उड़ रहे हैं। वायु-वेग के समान वे सर्र-सर्र उड़े जा रहे थे। सब लोग उनके ऐसे अद्भुत अलौकिक पुरुषार्थ को देखकर आश्चर्यचकित हो एकटक उन्हें निहार रहे थे। समुद्र के जल जन्तु भयभीत होकर समुद्र के तल में छिप गये। पक्षियों ने आकाश में उड़ना बंद कर दिया। हनुमानजी बिना विश्राम किये निरन्तर वायुवेग के सदृश समुद्र के जल पर उड़ते ही जा रहे थे।

हिमालय के पुत्र मैनाक ने, जो समुद्र में छिपा हुआ है, कहा भी, 'हनुमान'! तनिक विश्राम कर लो, फिर आगे बढ़ो।' किन्तु उसकी ओर बिना देखे ही हनुमानजी ने शीघ्रतापूर्वक चलते-चलते ही कहा- 'मैनाक भाई! धन्यवाद्। धन्यवाद्!! इस कृपा के लिए साधुवाद! श्रीरामचन्द्रजी का कार्य जब तक मैं कर न लूंगा, तब तक मुझे विश्राम कहां, आराम कहां। मुझे आज्ञा दो, शीघ्र पहुंचना है उस पार।' सर्पों की माता सुरसा को देवताओं ने हनुमानजी की बुद्धि की परीक्षा लेने

भेजा। उसने आकर कहा-'ओ वानर! खड़ा रह, मैं तुझे खाऊंगी, बड़ी भूखी हूं। देवताओं ने मेरे लिये तुम्हें ही आहार के निमित्त भेजा है।' हनुमानजी ने कहा- मॉं! मैं शीघ्रता में हूं। लौट आऊं, तब खा लेना।' उसने कहा-'बातें मत बनाओ। तुम बहुत हृष्ट-पुष्ट ब्रह्मचारी बलवान हो, मैं तुम्हरा ही आहार कर संतुष्ट होऊंगी।' बात को अधिक न बढ़ाकर वानबोले- 'अच्छा नहीं मानती है तो फाड़ मुख।'उसने मुख फाड़ा, ये उससे दुगुने बन गये। फिर उसने दुगुना मुख फाड़ा तो ये उससे भी दुगुने बन गये। ऐसे दुगुना-दुगुना बढ़ाते हुए जब उसने मुख को सौ योजन चौड़ा बना लिया, तब ये छोटा-सा रुप बनाकर उसके मुख में घुस गये। उसके एक प्रकार से पुत्र बन गये और बाहर निकलकर हाथ जोड़कर खड़े हो गये। बोले- 'मॉं! अब तो मैं तुम्हारे उदर में चला गया, अब आज्ञा दे दो।' सुरसा इनके बुद्धि कौशल को देखकर परम प्रमुदित हुयी और इन्हें भांति-भांति के आशीर्वाद देकर चली गयी। ये आगे बढ़ गये।

आगे चलकर एक विघ्न और आ गया। राहु की माता सिंहिका, जो समुद्र में ही रहती थी, आकाश में उड़ने वालों की समुद्र में पड़ती हुई छाया के द्वारा ही उन्हें खींचकर पकड़ लेती और खा जाती। उसने इनकी छाया को भी खींचा। ये उसकी धूर्तता समझ गये और ऐसा कसकर एक मुक्का जमाया कि उसके लगते ही वह परलोक सिधार गयी। हनुमानजी समुद्र पार पहुंच गये। अब उन्होंने सोचा, इस पर्वताकार शरीर से लंका में प्रवेश करना उचित नहीं। समस्त सिद्धियां तो सदा इनके सम्मुख समुपस्थित ही रहती थीं। इन्होंने अणिमासिद्धि के द्वारा अपना बहुत ही छोटा-सा रुप बना लिया। लंका की अधिष्ठात्री देवी जो सदा ही लंका की रक्षा किया करती थी, किसी अपरिचित व्यक्ति को बिना अनुमति के भीतर प्रविष्ट ही न होने देती थी। बहुत लघु रुप होने पर भी उसने इन्हें देख लिया और गरज कर बोली- कौन है तू, जो चोर की भांति मेरा तिरस्कार करके लंका में प्रवेश कर रहा है? सावधान, आगे न बढ़ना। नही ंतो तुझे खा जाऊंगी।' हनुमानजी ने बात को बढ़ाया नहीं। उन्होंने बिना कुछ सोचे-समझे उसे कसकर एक ऐसा मुक्का मारा कि वह अचेत होकर गिर पड़ी ।तब उसने कहा-'कपिराज! अवश्य ही तुम श्रीराम के दूत हो, अब लंका का विनाश सन्निकट आ गया। ब्रह्माजी ने मुझे पूर्व में ही बता दिया था कि जब तू बंदर के मुष्टि प्रहार से अचेत हो जायेगी, तब समझ जाना कि अब लंका का विनाश होगा। अतः तुम प्रसन्नता से भीतर चले जाओ।' इतना सुनते ही रात्रि के समय हनुमानजी ने लंका में प्रवेश किया।

श्रीराम-काज करने वाले ब्रह्मचारी को सात्विक, राजसिक और तामसिक तीनों प्रकार की मायायें आकर घेरती हैं और उसे भांति-भांति के प्रलोभन देती हैं। जो इनके फंदे में फंस जाता है वह गिर जाता है तथा जो इन पर विजय प्राप्त कर लेता है वह आगे बढ़ जाता है। सात्विक माया को तो हाथ जोड़ ले, उसका मातृभाव से केवल स्पर्श करके आगे बढ़ जाये। तामस माया आये तो उसे मारकर ही आगे बढ़े। राक्षस माया को मारे नहीं, केवल मुर्च्छित करके आगे बढ़ जाए। यही हनुमानजी ने किया। अब उन्हें सीताजी के अन्वेषण की चिनता हुई। पहले उन्हें घुड़साल दिखायी दी। उसमें घुस गये, वहां असंख्यों घोड़े बंधे थे। उसमें हनुमानजी चारों ओर घूम-घूमकर सीताजी को खोजने लगे। वहां न मिलने पर हस्तिशाला, गोशाला आदि में खोजने लगे, फिर सोचने लगे-''मैं भी कैसा पागल हूं जो स्त्री को गोशाला, गजशाला, अश्वशाला तथा दूसरे पशु-स्थानों में खोज रहा हूं। स्त्री तो स्त्रियों में ही हो सकती है। चलूं, रावण की महिषी शाला में खोजूं। यह सोचकर वे रावण के अन्तःपुर में गये। वहां एक सुवर्ण मंडित पलंग पर रावण सो रहा था। उसके समीप गलीचों पर सहस्त्रों स्त्रियां पड़ी सो रही थीं। किसी का मुख सोते-सोते खुल गया था, किसी के मुख से लार गिर रही थी, कोई कोई जोर-जोर से खुर्राटे ले रही थी, कोई बड़बड़ा रही थी, कोई पान खाते-खाते सो गयी थी, पान की पीक उसके वस्त्रों पर टपक रही थी। हनुमानजी ने कभी सीताजी को देखा तो था नहीं, अतः प्रत्येक सुंदर स्त्री को देखते और सोचते हो-न-हो यही सीता हो, फिर उससे बढ़कर सुन्दरी को देखते तो उसे सीता समझने लगते। फिर सोचने लगे-''इनमें से कोई भी सीता नहीं। तब सीता गयी कहां। सम्पाती की बात झूठ तो हो नहीं सकती। उसने कहा था-'मैं सीता को लंका में बैठी देख रहा हूं।' अच्छा, लंका तो बहुत बड़ी है, फिर खोजूं।'' यह सोचकर वे फिर खोजने लगे। परन्तु कहीं पता न चला तो वे पुनः रावण के अन्तःपुर में आये। अबकी बार उन अस्त-वयस्त पड़ी स्त्रियों को देखकर उनके मन में बड़ी घृणा हुई। वे सोचने लगे-'ब्रह्मचारी को तो स्त्रियों के चित्र को भी नहीं देखना चाहिये। मैंने अर्धनग्न अवस्था में अचेत पड़ी हुई इन स्त्रियों को देखा है, इससे मुझे दोष लगा। बड़ा अपराध हुआ। इसका क्या प्रायश्चित करुं।

फिर सोचने लगे-मैंने स्त्रियों को देखने की दृष्टि से तो यहां प्रवेश किया नहीं। मैं तो माता सीता का अन्वेषण करने आया था। माता सीता स्त्रियों में ही मिलेंगी। इसी भावना से मैंने रावण के अन्तःपुर में प्रवेश किया। अपना अन्तःकरण ही पुरुष का साक्षी होता है। इन स्त्रियों को देखकर मेरे मन में किसी प्रकार का विकार नहीं उत्पन्न हुआ। पाप और पुण्य में भावना ही प्रधान होती है। जब मेरी भावना ही दूषित नहीं हुई तब प्रायश्चित ही किस बात का? किन्तु मैं जिस काम के लिये यहां आया था, वह काम तो अभी हुआ ही नहीं। सीताजी का पता तो लगा नहीं। मुझे सब काम छोड़कर सीताजी को ही खोजना चाहिये। यह सोचकर मारुतनन्दन बालब्रह्मचारी हनुमान फिर दूसरे स्थानों में सीताजी को खोजने लगे।

भारतीय दर्शन-शास्त्रों में विविध संस्कृति के अंदर आचार्यों ने अनेक कथाएं विभिन्न भाषाओं में लिखीं। उन्होंने जिस प्रकार से श्रीहनुमानजी का वर्णन किया, वह तर्कसंगत है। श्रीहनुमानजी तो वीतराग थे। उनकी माता अंजना भी उत्कृष्ट सती थीं। श्रीहनुमानजी का चरित्र वैज्ञानिक ढंग से रखने की आवश्यकता है, जिससे उनमें वीतरागता का निर्माण हो एवं समन्वय तथा शांति से लोग उस पर चलकर अपना जीवन सफल करें।

प्राचीनकाल की बात है, सुर-मुनि-सेवित-कैलास-शिखर पर महर्षि गौतम का आश्रम था। वहां एक बार पाताल लोग से जगत-विजयी वाणासुर अपने कुल गुरु शुक्राचार्य तथा अपने पूर्वज भक्त शिरोमणि प्रहलाद, दानवीर बलि एवं दैत्यराज वृषपर्वा के साथ आया और महर्षि गौतम के सम्मान्य अतिथि के रुप में रहने ला। एक दिन प्रातःकाल वृषपर्वा शौच-स्नान आदि नित्य कर्म से निवृत होकर भगवान शंकर की पूजा कर रहा था, इतने में ही महर्षि गौतम का एक प्रिय शिष्य जिसका अन्वर्थ नाम शंकरात्मा था और जो अवधूत के वेष में उन्मत्त की भांति विचरता था। विकराल रुप बनाये वहां आ पहुंचा और वृषपर्वा तथा उसने सामने रखी हुई शंकर की मूर्ति के बीच में आकर खड़ा हो गया। वृषपर्वा को उसका इस प्रकार का व्यवहार देखकर बड़ा क्रोध आया। उसने जब देखा कि वह किसी प्रकार नहीं मानता तब चुपके से तलवार निकाल कर उसका सिर धड़ से अलग कर दिया।

जब महर्षि गौतम को यह संवाद मिला, तब उनको बड़ा दुख हुआ, क्योंकि उसके बिना जीवन व्यर्थ समझा और देखते-देखते वृषपर्वा की आंखों के सामने योगबल से अपने प्राण त्याग दिये। उन्हें इस प्रकार देह-त्याग करते देखकर शुक्राचार्य से भी नहीं रहा गया, उन्होंने भी उसी प्रकार अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया और उनकी देखादेखी अन्य दैत्यों ने भी वैसा ही किया। बात की बात में ऋषि के आश्रम में शिव-भक्तों की लाशों का ढ़ेर लग गया। यह करुणामय दृश्य देखकर ऋषि-पत्नी अहल्या हृदयभेदी स्वर से आर्तनाद करने लगीं। उनकी क्रन्दन-ध्वनि भक्त-भयहारी भगवान भूतभावन के कानों तक पहुंची और उनकी समाधि भंग हो गयी। वे वायुवेग से महर्षि गौतम के आश्रम पर पहुंचे। इसी प्रकार गज की करुण पुकार सुनकर एक बार भगवान चक्रपाणि भी वैकुण्ठ से पांव-पियादे आतुर होकर दौड़े आये थे। धन्य भक्तवत्सलता। दैवयोग से ब्रह्माजी तथा विष्णु भगवान भी उस समय कैलास पर ही उपस्थित थे। उन्हें भी कौतूहलवश शंकरजी अपने साथ लिवा लाये।

भगवान त्रिलोचन ने आश्रम में पहुंचकर अपने कृपाकटाक्ष से ही सबको बात की बात में जिला दिया। तब वे सब खड़े होकर भगवान मृत्युंजय क स्तुति करने लगे। भगवान शंकर ने महर्षि गौतम से कहा- हम तुम्हारे इस अलौकिक साहस एवं आदर्श त्याग पर अत्यन्त प्रसन्न हैं, वर मांगो। महर्षि बोले- प्रभो! आपने यहां पधारकर मुझे सदा के लिए कृतार्थ कर दिया। इससे बढ़कर मेरे लिये और कौन सी वस्तु प्रार्थनीय हो सकती है? मैंने आज सब कुछ पा लिया। मेरे भाग्य की आज देवता लोग भी सराहना करते हैं। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरी एक प्रार्थना स्वीकार कीजिये। मैं चाहता हूं कि आज आप मेरे यहां प्रसाद ग्रहण करें।

भगवान तो भाव के भूखे हैं। उनकी प्रतिज्ञा है-पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छतिं।
तदहं भक्त्युपहृतमश्रामि प्रयतात्मनः।।

इसी भावना के वशीभूत होकर उन्होंने एक दिन श्रीराम रुप में शबरी के बेर और श्रीकृष्ण के रुप में सुदामा के तन्दुलों का भोग लगाया था। उन्होंने महर्षि की अविचल और निश्च्छल प्रीति देखकर उनका निमंत्रण तुरन्त स्वीकार कर लिया और साथ ही ब्रह्मा एवं विष्णु को भी महर्षि का आतिथ्य स्वीकार करने को राजी कर लिया। जब तक इधर भोजन की तैयारी हो रही थी तब तक शंकरजी भगवान विष्णु के साथ चलकर आश्रम के एक सुंदर भवन में गये और वहां एक सुकोमल शय्या पर लेटकर बहुत देर तक प्रेमालाप करते रहे। इसके अनन्तर वे आश्रम-भूमि में स्थित एक सुरम्य तड़ाग पर जाकर वहां जल-क्रीडा करने लगे। रंगीले भोले बाबा भगवान श्रीहरि के पद्मदलायत लोचनों पर कमलकिंजल्क मिश्रित जल अंजलि के द्वारा फेंकने लगे। भगवान ने उनके प्रहार को न सह सकने के कारण अपने दोनों नेत्र मूंद लिये। इतने में ही भोले बाबा मौका पाकर तुरन्त उछलकर भगवान के वृष-सदृश गोल-गोल सुडौल मांसल कंधों पर आरुढ़ हो गये। वृषभारोहण का तो उन्हें अभ्यास ही ठहरा, ऊपर से जोर से दबाकर उन्हें कभी तो पानी के अंदर ले जायें और कभी फिर ऊपर ले आवें। इस प्रकार जब उनहें बहुत तंग किया तब विष्णु भगवान ने भी एक चाल खेली। उन्होंने तुरन्त शिवजी को पानी में दे मारा। शिवजी ने भी नीचे से ही भगवान की दोनों टांगें पकड़कर उन्हें गिरा दिया। इस प्रकार कुछ देर तक दोनों में पैंतरेबाजी और दांव-पेंच चलते रहे। विमान स्थित देवगण अंतरिक्ष से इस अपूर्व आनंद को लूटने लगे। धन्य हैं वे आंखें जिन्होंने उस अदभुत छटा का निरीक्षण किया।

दैवयोग से नारदजी उधर आ निकले। वे इस अलौकिक दृश्य को देखकर मस्त हो गये और लगे वीणा के स्वर के साथ गाने। शंकरजी उनके सुमधुर संगीत को सुनकर खेल छोड़ जल से बाहर निकल आये और भीगे वस्त्र पहने ही नारद के सुर में सुर मिलाकर स्वयं राग अलापने लगे। अब तो भगवान विष्णु से भी नहीं रहा गया। वे भी बाहर आकर मृदंग बजाने लगे। उस समय वह समा बंधा, जो देखते ही बनता था। सहस्त्रों शेष और शारदा भी उस समय के आनंद का वर्णन नहीं कर सकते। बूढ़े ब्रह्माजी भी उस अनोखी

मस्ती में सम्मिलित हो गये। उस अपूर्व समाज में यदि किसी बात की कमी थी तो वह भी प्रसिद्ध संगीत कोविद पवनसुत हनुमानजी के आने से पूरी हो गयी। उन्होंने जहां अपनी हृदयहारिणी तान छेड़ी, वहां सबको बरबस चुप हो जाना पड़ा। अब तो सब के सब निस्तब्ध होकर लगे हनुमानजी के गायन को सुनने। सब के सब ऐसे मस्त हुए कि खान-पान तक की सुधि भूल गये। उन्हें यह भी होश नहीं रहा कि हम लोग महर्षि गौतम के यहां निमंत्रित हैं।

उधर जब महर्षि ने देखा कि उनका पूज्य अतिथि वर्ग स्नान करके सरोवर से नहीं लौटा और मध्यान्ह बीता जा रहा है, तब वे बेचारे दौड़े आये और किसी प्रकार अनुनय-विनय करके बड़ी कठिनाई से सबको अपने यहां लिवा लाये। तुरन्त भोजन परोसा गया और लोग लगे आनंदपूर्वक प्रसाद पाने। इसके अनन्तर हनुमानजी का गायन प्रारंभ हुआ। भोलेबाबा उनके मनोहर संगीत को सुनकर ऐसे मस्त हो गये कि उन्हें तन-मन की सुधि न रही। उन्होंने धीरे-धीरे अपना एक चरण हनुमानजी की अंजलि में रख दिया और दूसरे चरण को उनके कंधे, मुख, कंठ, वक्षस्थल, हृदय के मध्य भाग, उदरदेश तथा नाभिमंडल से स्पर्श कराते हुए मौज से लेट गये। यह लीला देखकर विष्णु कहने लगे- आज हनुमान के समान सुकृति विश्व में कोई नहीं है। जो चरण देवताओं को भी दुर्लभ हैं तथा वेदों के द्वारा अगम्य हैं, उपनिषद भी जिन्हें प्रकाश नहीं कर सकते, जिन्हें योगिजन चिरकाल तक विविध प्रकार के साधन करके तथा व्रत-उपवासादि से शरीर को सुखाकर क्षण भर के लिये भी अपने हृदय देश में स्थापित नहीं कर सकते, प्रधान-प्रधान मुनीश्वर सहस्त्रकोटि संवत्सर पर्यन्त तप करके भी जिन्हें प्राप्त नहीं कर सकते, उन चरणों को अपने समस्त अंगों पर धारण करने का अनुपम सौभाग्य आज हनुमान को अनायास ही प्राप्त हो रहा है। मैंने भी हजार वर्ष तक प्रतिदिन सहस्त्र पद्मों से आपका भक्तिभावपूर्वक अर्चन किया परन्तु यह सौभाग्य आपने मुझे कभी प्रदान नहीं किया। लोक में यह वार्ता प्रसिद्ध है कि नारायण शंकर के परम प्रीतिभाजन हैं और शंकर नारायण के, परन्तु आज हनुमान को देखकर मुझे इस बात पर संदेह-सा होने लगा है और हनुमान के प्रति ईष्या-सी हो रही है।

मया वर्षसहस्त्रं तु सहस्त्राब्जैस्तथान्वहम्।
भक्त्या सम्पूतिजोअपीश पादो नोदर्शितस्त्वया।।
लोके वादों हि सुमहांशम्भुर्नारायणप्रियः ।
हरिः प्रियस्तथा शम्भोर्न तादृग् भाग्यमस्ति मे।।

-कल्याण के श्रीहनुमान अंक से साभार

दहेज

श्रीमती अर्चना रघुवंशी

दहेज यानी कि विवाह में बेटी के साथ दी जाने वाली धनराशि एवं वे सभी चीजें जो गृहस्थी चलाने के काम में आने वाली होती हैं, दी जाती हैं। सवाल यह उठता है कि क्या दहेज दिया जाना सही है अथवा गलत। प्राचीन भारत में भी यह परम्परा प्रचलित थी परन्तु इस तरह नहीं, जैसा कि आज इसका रुप हो गया है। यदि हम पुराने इतिहास पर नजर डालें तो देखते हैं कि अंग्रेजों के शासन के समय भी यह प्रथा प्रचलित थी। यहां तक कि एक अंग्रेजी कवि ने अपनी कविता में इस प्रथा को सराहा था, वह इसलिए क्योंकि पहले इसके मायने ही अलग थे, अर्थात प्राचीन समय में यह बेटे और बेटी में फर्क न करते हुए माता-पिता अपनी सम्पत्ति में से बेटी को कुछ धनराशि एवं तोहफे स्वरुप कुछ वस्तुएं जिनमें कि स्वर्ण आभूषण आदि होता था जो कि सिर्फ पुत्री के लिए होता था। लेकिन आज इस प्रथा का रुप बदल गया है, आज इस प्रथा ने लालच का रुप ले लिया है जिसके फलस्वरुप लोगों की अपेक्षाएं बढ़ गई हैं और इसका परिणाम स्त्री जाति पर हिंसा के रुप में सामने आया है। दहेज के लोभी लोग अपने पुत्रों की शादी अच्छे घराने में इसलिए करते हैं ताकि दहेज में एक मोटी रकम मिल जाये और अगर सामान्य या मध्यम वर्गीय परिवार की बेटी बहू आती है तो उनकी इच्छा अनुसार दहेज नहीं ला पाती है। इसके कारण उसे आजीवन ताने सुनने पड़ते हैं या कई बार तो उस पर इतने अत्याचार होते हैं कि या तो वह परेशान होकर खुदकुशी कर लेती है या जालिम लोगों द्वारा उसे जला दिया जाता है।

कई लोग घर में बेटी पैदा होने पर काफी दुखी हो जाते हैं, यदि बेटा पैदा होता है तो खुशी मनाते हैं, उत्सव करते हैं। अब मैं आपका ध्यान अपने समाज की ओर ले जाना चाहूंगी। हमारे समाज में भी ये प्रथा बहुत ज्यादा ही प्रचलित है तो क्या आज का युवा वर्ग इतना कमजोर और असहाय है या उसे अपने आप पर भरोसा नही है। वह दहेज पर निर्भर हो गया है। क्या वह इतना भी आत्मनिर्भर नहीं है कि अपनी होने वाली पत्नी व बच्चों को दो वक्त की रोटी खिला सके और अपने कंधों पर उनकी जिम्मेदारी उठा सके। अगर उससे यह सब नहीं हो सकता तो मैं कहती हूं उसे विवाह करने का कोई अधिकार नहीं है। जब वह अपने आपको पहले परिपक्व बना ले और अच्छी शिक्षा हासिल कर आत्मनिर्भर बने उसके बाद ही विवाह करे, वरना लानत ही है उस पर। मैं सामाजिक बंधुओं से अपील करती हैं कि दहेज के लिए लड़का बेचना बंद करो, साथ ही युवाओं से अपील है कि जागो ताकि यह दहेज रुपी अभिशाप समाप्त हो सके।

पेज 1 का शेष

वास्तव में यदि हम चिंतन-मनन करेंगे तो यह पायेंगे कि जीवन का सबसे महत्वपूर्ण क्षण वर्तमान ही होता है क्योंकि भूतकाल तो गुजर चुका होता है और उसका कोई अस्तित्व नहीं होता, भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि वर्तमान समय का हम किस ढंग से सदुपयोग करते हैं। श्रीमॉ और श्रीअरविन्द के विचारों के संदर्भ में यदि हम देखेंगे तो पायेंगे कि हमें हमेशा ऊंचा उड़ते जाना चाहिए, दूर-दूर तक चलते रहना चाहिए और बिना हिचक के अपने कर्तव्य पथ पर पूरी निष्ठा के साथ आगे बढ़ना चाहिए तो हम यह पायेंगे कि वर्तमान की जो आशाएं हैं या वर्तमान में हम भविष्य के बारे में जो स्वप्न देख रहे हैं वह हमारी कल की सिद्धियां होंगी। श्रीमॉ और श्रीअरविन्द ने इस बात पर जोर दिया है कि हम वही करते चलें जो सही व उचित है। भविष्य के बारे में ज्यादा चिंता न करें और भविष्य को भागवत कृपा के हाथों में छोड़ दें।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हर नया प्रभात अपने साथ नई प्रगति की अनन्त संभावनाएं समेटे हुए आता है। हम बिना जल्दबाजी के आगे बढ़ते जायेंगे, क्योंकि हम भविष्य की बारे में निश्चिन्त हैं, इसीलिए वे धन्य हैं जो भविष्य में छलांग मारते हैं। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि जिस दिन हम अपनी उपलब्धियों से या जहां तक हम पहुंच गये हैं उस स्थिति से पूरी तरह संतुष्ट हो जायेंगे और आगे के लिए अभीप्सा यानी प्रयास करना छोड़ देंगे उसी क्षण से हम मरना शुरु कर देंगे। हमेशा यह याद रखना होगा कि जीवन गति है, जीवन प्रयास है, यह आगे ही आगे की ओर कूच है, भावी उद्घाटनों और सिद्धियों की ओर आरोहण है। ऐसी परिस्थितियों में आराम की चाहत पालने से ज्यादा भयंकर और कुछ नहीं हो सकता, इसलिए हमें केवल कर्तव्य-पथ पर हमेशा पूरी शिद्दत से कर्म करते जाना चाहिए। यह भी समझना होगा कि पूर्णता का कोई शिखर नहीं है और न ही कोई अंतिम सीमा है।

हम जो कुछ भी करते हैं या जो भी पाना चाहते हैं उसका भी कोई अन्त नहीं है क्योंकि हमारा जीवन गतिशील है। आदमी में सोचने-समझने और चिंतन-मनन करने की शक्ति होती है इसलिए हमेशा अच्छे से अच्छा करने की संभावना बनी रहती है और यही संभावना प्रगति का वास्तविक अर्थ है यानी कभी भी अपनी उपलब्धियों को अंतिम न मानकर आगे प्रगति करते रहने के लिए प्रयास करते रहना चाहिए। जिस दिन हम जिस पायदान पर पहुंचे हैं उसे अंतिम सीढ़ी मान लेंगे तो फिर हम वहीं ठहर जायेंगे और आगे नहीं बढ़ पायेंगे। हमें अपने प्रयासों और विचारों में ठहराव नहीं लाना चाहिए बल्कि और क्या अच्छा कर सकते हैं इस दिशा में प्रयास करते रहना चाहिए।

श्रीमॉ और श्रीअरविन्द ने हमें यही बताया है कि बाहर के सारे शोरगुल को चुप कर दो, भागवत सहायता के लिए अभीप्सा करो, जब वह आये तो अपने आपको उसके प्रति पूरी तरह से खोल दो और उसकी क्रिया के प्रति समर्पित हो जाओ, यह स्थिति प्रभावी रुप से तुम्हारा रुपान्तरण ले आयेगी, समस्त विश्व में तेरे जीवन, तेरे प्रकाश, तेरे प्रेम के सिवा कुछ भी नहीं है यही संदेश श्रीमॉ और श्रीअरविन्द ने मानव मात्र को दिया है। इच्छाशक्ति को विकसित करो, इच्छाशक्ति विकसित होती है उसके स्थिर प्रयोग से। ठीक वैसे ही जैसे मांसपेशियां उतनी ही अधिक सुदृढ़ होंगी जितना अधिक उनका प्रयोग किया जायेगा। अनुशासन के बिना कोई काम अच्छा नहीं हो सकता। हर एक अपने स्थान पर ईमानदारी से नियत काम करे तो सब कुछ ठीक होगा, यदि काम में कुछ कठिनाई का सामना होता है तो सच्चाई से अपने अंदर देखो तो उसके मूल को पा जाओगे। जब-जब हम अपने आपमें चंचलता अनुभव करें तो उस स्थिति से निकलने के लिए श्रीमॉ ने कहा है कि अपने अंदर ही अंदर कोई बाह्य आवाज किए बिना मेरा नाम लेते हुए कहो ''शांति, शांति ओ मेरे हृदय।'' ऐसा लगातार करते रहो इसका फल सुखकर ही होगा।

प्रसन्नता अवसाद की तरह छुतहा है और लोगों के अंदर सच्ची तथा गहरी प्रसन्नता फैलाने से अधिक उपयोगी और कुछ नहीं हो सकता। दूसरों से सुख लेने की अपेक्षा दूसरों को सुख देने में हमें ज्यादा खुशी मिलती है यह हमेशा याद रखना चाहिए। अपने दुश्मन की ओर यथार्थ रुप में हम तभी मुस्करा सकते हैं जब हम समस्त अपमान और तिरस्कार से ऊपर हों, यौगिक मनोवृत्ति की यह प्राथमिक शर्त है। जो लोग वास्तव में बलवान व प्रभावशाली होते हैं हमेशा बहुत शांत रहते हैं, केवल कमजोर ही बेचैन हो उठते हैं जबकि यथार्थ यह है कि सच्ची शांति हमेशा शक्ति की निशानी है। हर बुराई संतुलन के अभाव से आती है, अपनी मुश्किलों से दो-चार होकर आदमी उन्हें जीत सकता है, उनसे दूर भाग कर नहीं। जो उनके पीछे निरंतर लगा रहता है उनकी जीत निश्चित है, सबसे अधिक सहनशील व्यक्ति को अंततः विजय मिलती है। अपने तईं अच्छे से अच्छा करने के लिए हमेशा प्रयत्न करते रहना चाहिए और जहां तक परिणामों का सवाल है उसे भगवान पर छोड़ देना चाहिए। जब भी हमारे जीवन में कठिनाई आये तो उसे हमें भागवत कृपा के रुप में लेना चाहिए और ऐसा करने पर वह सचमुच कृपा बन जायेगी। भागवत कृपा पर पूरा भरोसा रखने से शांति आती है जिसकी किसी के साथ तुलना नहीं की जा सकती, यह अपने आपमें अतुलनीय है।

-अरुण पटेल

जागरुकता के लिए जरुरी है सोने से बचना

साधना करते समय यह नितान्त जरुरी है कि हम पूरी तरह सजग और चैतन्य रहें। इसका मतलब यह है कि हम हमेशा जागृत अवस्था में रहें और सोते हुए ही अपना समय न बिता दें। एक बड़ी मशहूर कहावत है कि सोते हुए को तो एक बार जगाया जा सकता है लेकिन जो सोने का स्वाँग कर रहा हो उसे जगाना असंभव है, इसका मतलब साफ है कि जागरुक रहने के लिए हमारे अंदर किसी प्रकार का आलस नहीं होना चाहिए। हमेशा जागते रहना चाहिए क्योंकि जागृत अवस्था ही हमें हमेशा जागृत करने के लिए प्रेरित करती रहेगी। जब तुम साधना करना चाहते हो तो तुम्हें अपने जीवन के प्रत्येक क्षण चुनाव करना होगा- या तो तुम वह पग उठाओगे जो तुम्हें लक्ष्य की ओर ले जायेगा अथवा तुम सो जाओगे या कभी-कभी पीछे भी हट जाओगे, रास्ते में बैठकर अपने-आपसे कहोगे ''ओह- बाद में, अभी तुरन्त नहीं। जागरुक होने का अर्थ केवल यही नहीं है कि जो चीज तुम्हें नीचे की ओर खींचती है उसका प्रतिरोध करो, बल्कि उसका अर्थ है सजग होना ताकि तुम प्रगति करने का, किसी कमजोरी को जीतने का, किसी प्रलोभन का प्रतिरोध करने का, कोई चीज सीखने का, कोई चीज सुधारने का, तुम जागरुक हो तो जो चीज कई साल ले सकती है उसे तुम कुछ ही दिनों में कर सकते हो। यदि तुम जागरुक हो तो अपने जीवन की प्रत्येक परिस्थिति को, प्रत्येक कार्य, प्रत्येक गतिविधि को लक्ष्य के अधिक समीप जाने के एक सुयोग में परिवर्तित कर लोगे।

श्रीमातृवाणी में कहा गया है कि जागरुकता दो प्रकार की होती है, निष्क्रिय जागरुकता और सक्रिय जागरुकता। एक जागरुकता ऐसी है जो तुम्हें ठीक उसी समय चेतावनी देती है जिस समय तुम कोई भूल करने वाले होते हो, तुम कोई गलत चुनाव करने वाले होते हो, तुम दुर्बल बनने जाते हो अथवा किसी प्रलोभन में पड़ जाते हो, दूसरी जागरुकता सक्रिय होती है जो प्रगति करने का अवसर ढूंढती है, अधिक तेजी से आगे बढ़ने के लिए प्रत्येक परिस्थिति का उपयोग करना चाहती है। और दोनों प्रकार की जागरुकताएं एकदम आवश्यक हैं। जो जागरुक नहीं है वह मरा हुआ ही है। उसने अस्तित्व के, जीने के सच्चे कारण के साथ अपना सम्पर्क खो दिया है। अतएव घण्टे, परिस्थितियां, जीवन, सभी बिना कुछ दिये चले जाते हैं और तुम अपनी नींद से एक ऐसी खाई में जगते हो जहां से बाहर निकलना बड़ा कठिन होता है।

वर्तमान संसार में मनुष्य का साधारण जीवन, जैसा अभी है, मन के द्वारा शासित है, अतएव सबसे अधिक महत्व की बात है अपने मन को संयमित करना, अतः अपने मन को विकसित और संयमित करने के लिए हम एक क्रमबद्ध साधना का अनुसरण करेंगे। चार क्रियाएं हैं जो सामान्यतया क्रमशः एक के बाद एक आती हैं पर जो अन्त में चलकर एक साथ भी की जा सकती हैं। उनमें से पहली है अपने विचारों का अवलोकन करना, दूसरी है सतर्कतापूर्वक उनकी चौकसी रखना, तीसरी है अपने विचारों को संयमित करना और चौथी है अपने विचारों पर प्रभुत्व पाना। देखना, चौकसी रखना, संयमित करना और अधिकार में लाना। श्रीमातृवाणी में कहा गया है कि मन को शुद्ध करने की प्रक्रिया के चार क्रमबद्ध स्तर हैं। शुद्ध या स्वच्छ मन स्वभावतः एक ऐसा मन होता है जो किसी बुरे विचार को अपने अंदर नहीं आने देता और हमने देखा है कि इस परिणाम को प्राप्त करने के लिए विचारों पर जिस पूर्ण प्रभुत्व की आवश्यकता है वह मेरे बताये हुए चारों स्तरों के अन्त में प्राप्त होता है। उनमें पहला है- मन का अवलोकन करना। यह न मान बैठो कि यह बड़ा आसान है, क्योंकि अपने विचारों को देखने के लिए तुम्हें ससे पहले अपने आपको उनसे पृथक करना होगा। साधारण अवस्था में, साधारण मनुष्य स्वयं को अपने विचारों से भिन्न नहीं देखता। वह यह भी नहीं जानता कि वह सोचता है। वह अभ्यासवश सोचता है और यदि एकाएक उससे यह पूछा जाये-''तुम क्या सोच रहे हो''-तो वह इस विषय में कुछ नहीं जानता। कहने का मतलब १०० में से ९५ बार तो वह यही उत्तर देगा। -मैं नहीं जानता-। इस स्थिति में चिन्तन की क्रिया और मनुष्य की चेतना के बीच एक प्रकार का पूर्ण तादात्म्य होता है।

विचारों का अवलोकन करने के लिए पहली क्रिया होगी अपने आपको पृथक करने की, उनकी ओर देखने की, अपने विचारों से अपने आपको अलग करने की ताकि चेतना की गति और चिन्तन की गति परस्पर उलझी हुई और अस्पष्ट न हों। अतएव जब हम यह कहते हैं कि हमें अपने विचारों को देखना चाहिये तब यह न समझ बैठो कि यह बड़ा सरल है, य सबसे पहला कदम है। ''उसने मेरी निंदा की, मुझे मारा, मुझे नीचा दिखाया, मुझे लूट लिया- जो ऐसे विचारों को मन में पालते हैं उनका बैर कभी शान्त नहीं होता। ''धम्मपद'' ने सबसे पहले हमसे यह कहा है कि बुरे विचार दुख लाते हैं और अच्छे विचार सुख। अब वह बुरे विचारों के उदाहरण देता है और कहता है कि दुख से कैसे बचा जा सकता है। श्रीमातृवाणी में श्रीमाँ कहती हैं यह है पहला उदाहरण, मैं दोहराती हूं- ''उसने मेरी निंदा की, मुझे मारा, मुझे नीचा दिखाया, मुझे लूट लिया- और फिर वह कहता है कि जो लोग ऐसे विचारों का पोषण करते हैं उनका बैर कभी शान्त नहीं होता।'' अपने अपनी मानसिक साधना का आरंभ

कर दिया है और इसके लिए मानसिक विकास के क्रमबद्ध स्तरों को अपना आधार बनाया है और हमने यह देखा है कि इस साधना में एक के बाद एक निश्चय ही तुम्हें याद होगा, क्रम से आने वाली चार क्रियाएं हैं जिनका हमने इस प्रकार वर्णन किया है- अवलोकन करना, चौकसी रखना संयमित करना और प्रभुत्व स्थापित करना। अपने पिछले पाठ में- मुझे आशा है अपने यह सीखा है कि अपने विचारों से अपने आपको कैसे पृथक करें ताकि हम उन्हें एक सतर्क द्रष्टा की तरह देख सकें।

श्रीमॉं कहती हैं कि हमें यह सीखना है कि इन विचारों पर चौकसी कैसे रखी जाये। सबसे पहले तुम उनकी ओर देखो और फिर उनकी निगरानी करो। हम एक ज्ञानवान जज की तरह उनको ध्यानपूर्वक देखना सीखते हैं ताकि हम अच्छे और बुरे विचारों के बीच लाभदायी और हानिकारक विचारों के बीच, विजय की ओर ले जाने वाले रचनात्मक विचारों और विजय से दूर ले जाने वाले पराजयवादी विचारों के बीच विभेद कर सकें। यही वह विवेक शक्ति है जिसे हमें अब अवश्य प्राप्त करना चाहिये। जैसा कि मैं तुमसे कह चुकी हूं- 'धम्मपद' हमें उदाहरण देगा पर उदाहरण तो उदाहरण ही हैं। हमें स्वयं यह सीखना होगा कि अच्छे विचारों को हम बुरे विचारों से अलग कैसे कर सकते हैं और इसके लिए जैसा कि मैं कह चुकी हूं तुम्हें एक ज्ञानवान जज की तरह ध्यानपूर्वक देखना होगा- अर्थात् जितना अधिक संभव हो उतना अधिक पक्षपातशून्य होकर देखना होगा।

यह उन शर्तों में से एक अनिवार्य शर्त है। "उसने मेरी निंदा की, मुझे मारा, मुझे नीचा दिखाया, मुझे लूट लिया-" जो लोग ऐसे विचारों को मन में नहीं रखते उनका बैर शान्त हो जाता है। हमने उस दिन जो पढ़ा उसी का यह परिपूरक अंश है। यहां प्रश्न केवल उन विचारों का ही नहीं है जो घृणा उत्पन्न करते हैं क्योंकि ईर्ष्या के साथ-साथ डाह भी मानव दुख के अत्यन्त व्यापक कारणों में से एक है। परन्तु डाह से केसे बचा जाये, एक विशाल और उदार हृदय ही वास्तव में इसका सबसे अच्छा साधन है परन्तु इसे प्राप्त करना सबकी पहुंच में नहीं है। अपने विचारों को संयमित करना संभवतः कहीं अधिक व्यवहार्य हो सकता।

धर्म क्या है

श्रीमती रीना रघुवंशी

ये अब जाना कि यही तो 'में' की पहचान है, आधार की धुरी है जो 'मे' को मानव के आधार में लाता है फिर यही मानव सृष्टि का कर्ताधर्ता बनता है। "सनातन ही धर्म है।" कुछ दिव्यजन इसे शीघ्र समझ लेते हैं, कुछ को समय लगता है पर 'धर्म' हमें जगाये बिना जग से जाने नहीं देता है।

धर्म विचार में नहीं रक्त में है जो पल-पल हमें झकझोरता है। हम जब यह समझते हैं कि हम समाज का निर्माण करते हैं और यह सृष्टि धीरे-धीरे बिना कुछ कहे 'में' को स्वयं में समाहित कर 'सनातन' अगली पीढ़ी का आधार रखती है। धर्म में ही आधार-धुरी-सृष्टि 'सनातन' है और हमारी पहचान है इसे समय रहते समझें। मुझे गर्व है कि मैं हूं, हां है खेद कि अब हूं। में दिव्य नहीं तो क्या खुश हूं अब तो।

रिश्तों के मूल्य

मैं कौन हूं ये कौन बताता है, न बताये तो आज मैं कौन होती ये समझ नहीं आता। तब रिश्तों का मूल्य समझ आया कि जो रिश्ते हैं या नहीं है, कुछ आधे अधूरे हैं, इनके होने से ही हम हैं वरना नहीं हैं। यही मानव का आधार है। मेरा अनुभव है कि रिश्ते निभायें न निभें तो अल्प विराम दें और इनका मूल्य समझें। मन को मिलनसार बनायें, रिश्ते जीवनशैली और विचारों से कहीं ऊपर होते हैं।

रिश्तों को विराम तो दें परंतु उनके स्थान को रिक्त भी रखें ताकि जब मिलन की बेला आये तब हम कह सकें कि आपका स्थान आज भी आपका है और मिलन न हो तब तक हमें संतुष्टि रहे। हमारे विचार नहीं मिलते तो हम दूर हैं , पर उनके बिना हम अकेले हैं। रिश्तों के पर्याय नहीं होते ये दूरी से नहीं, पर्याय से आहत होते हैं।

पत्नी श्री जितेंद्र सिंह रघुवंशी
अशोकनगर म.प्र.
मोबाइल-8889780635

सभी सत्ताओं के मूल में है 'महाशक्ति'

कई बार मन में यहां सवाल उठता है कि सत्ता के मूल में आखिर क्या मूलतत्व सन्निहित है। यदि हम बारीकी से देखें और श्रीमॉ और श्रीअरविन्द के द्वारा दिखाये गये मार्ग को समझने की कोशिश करें तो पायेंगे कि सभी प्रकार की सत्ताओं के मूल में केवल एक महाशक्ति ही है। मॉ की चार शक्तियां उनके चार प्रमुख व्यक्तित्व हैं। वे उनकी दिव्यता के अंश और साकार रुप हैं जिनके द्वारा वे अपने जीवों पर क्रिया करती हैं और लोक-लोकान्तर की अपनी सृष्टियों में व्यवस्था और समस्वरता लाती हैं और अपनी हजारों शक्तियों के कार्य सूत्र का संचालन करती हैं। माता हैं तो एक ही परंतु वे हमारे सामने भिन्न-भिन्न रुपों में आती हैं। उनकी अनेक शक्तियां और व्यक्तित्व हैं। उनसे निकले हुए बहुत से रुप और विभूतियां हैं जो सृष्टि में उनका काम करते हैं। जिस ''एक'' की हम माता के रुप में पूजा करते हैं वे भागवत चित्त-शक्ति हैं जो सारी सृष्टि पर छायी हुई हैं। एक होते हुए भी उनके इतने अधिक पहलू हैं कि तेज से तेज मन और अधिक से अधिक स्वतंत्र और विशाल बुद्धि के लिए भी उनकी गति का अनुसरण कर सकना असंभव है। माता परम-पुरुष की चेतना और शक्ति हैं और वे अपनी सारी सृष्टियों के बहुत ऊपर हैं। फिर भी उनकी गतिविधि की कुछ चीजें उनके साकार रुपों के द्वारा देखी और अनुभव की जा सकती हैं और ज्यादा आसानी से पकड़ में आ सकती हैं क्योंकि भगवती जिन दिव्य रुपों में अपने जीवों के आगे प्रकट होना स्वीकार करती हैं उनके स्वभाव और कर्म ज्यादा निश्चित और सीमित होते हैं।

महर्षि श्रीअरविंद का कहना है कि जब हम समस्त जीवों को तथा विश्व को धारण करने वाली सचेतन शक्ति के साथ एकता के सम्पर्क में आते हैं तभी माता की तीन प्रकार की सत्ता से अवगत हो सकते हैं। वे परात्पर आद्या परमाशक्ति के रुप में सभी लोकों के ऊपर खड़ी रहकर परम पुरुष के कभी व्यक्त न होने वाले रहस्य के साथ सृष्टि का नाता जोड़ती हैं। वैश्व रुप में वे सारे ब्रह्मांड में बसी हुई महाशक्ति के रुप में इन सभी सत्ताओं को रचती हैं, इन सब अनगिनत प्रक्रियाओं और शक्तियों को धारण करती हैं और उनमें समायी रहती हैं, वे ही उन्हें सहारा देती हैं और उनका संचालन करतीह हैं। व्यक्तिगत रुप में वे अपनी सत्ता के इन दोनों अधिक विशाल रुपों की शक्ति को मूर्तरुप देती हैं, उन्हें जीवन देती हैं और हमारे नजदीक लाती हैं। वे मानव व्यक्तित्व और दिव्य प्रकृति के बीच की कड़ी बनती हैं।

श्रीअरविंद ने माता पुस्तक में कहा है कि आद्या परात्पर शक्ति के रुप में माता सब लोकों के ऊपर स्थित हैं और अपनी शाश्वत चेतना में परम-पुरुष को धारण करती हैं। वे अकेली ही अपने अंदर चरम शक्ति और ऐसी उपस्थिति को लिये रहती हैं जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वे ही उन सत्यों को धारण करती या पुकारती हैं जिन्हें इस जगत में प्रकट होना है। वे उन सत्यों को, उस रहस्यमय स्थान से, जहां वे छिपे हुए थे, उतार कर अपनी अनन्त चेतना की ज्योति में नीचे लाती हैं और उन्हें अपने सर्वशक्तिमान सामर्थ्य के द्वारा शक्ति का रुप तथा असीम जीवन और विश्व में शरीर प्रदान करती हैं। परम-पुरुष उन माता के अंदर सनातन काल के लिए अनन्त सच्चिदानंद के रुप में अभिव्यक्त हैं और उन्हीं के द्वारा लोकों में वे इश्वर-शक्ति के एक और द्विविध रुप में तथा पुरुष-प्रकृति के द्वैत तत्व में अभिव्यक्त होते हैं। परम पुरुष माता के द्वारा अनेक लोकों और चेतना की भूमिकाओं में तथा देवता और उनकी शक्तियों में मूर्तिमान हुए हैं। उन्हीं के कारण वे जाने ओर अनजाने लोकों में जो कुछ है उन सब रुपों में साकार हुए हैं। सब कुछ परम पुरुष के साथ माता की लीला है। माता ने ही इस सारे संसार में सनातन के रहस्यों और अनन्त के चमत्कारों को व्यक्त किया है। माता ही सब कुछ हैं क्योंकि सभी चीजें दिव्य चित्-शक्ति के अंश और भाग हैं। माता जिस बात का निश्चय करती हैं और जिसके लिए परम पुरुष स्वीकृति देते हैं उसके सिवाय यहां या कहीं और कुछ भी नहीं हो सकता। परम पुरुष की प्रेरणा से माता अपने सर्जनशील आनंद में बीज के रुप में डाल कर जिन चीजों को देखती और आकार देती हैं उनके सिवाय और कोई चीज रुप धारण नहीं कर सकती।

श्रीअरविंद के अनुसार अपनी परात्पर चेतना में महाशक्ति, विश्व माता, परम-पुरुष से जो कुछ प्राप्त करती हैं उसे मूर्त रुप देकर अपने बनाये हुए लोकों में स्वयं भी प्रवेश कर जाती हैं। माता की उपस्थिति उन लोकों को अपने दिव्य व्यक्तित्व, अपने धारण करने करने वाले बल और आनन्द से भर देती हैं और उन्हें सहारा देती हैं। इनके बिना उन लोकों का अस्तित्व ही न हो पाता। हम जिसे प्रकृति कहते हैं वह माता का एकदम बाहरी और कार्य निर्देशक रुप है। माता अपनी शक्तियों और प्रक्रियाओं की समस्वरता की व्यवस्था करती हैं, प्रकृति के कार्यों को आगे बढ़ाती हैं, इंद्रियों या अनुभव के द्वारा पकड़ में आ सकने वाली या जीवन की गति के लिए उपयोगी हर वस्तु को प्रकट या अप्रकट रुप से संचालित करती हैं। लोकों में से प्रत्येक, अपने-अपने लोक-संस्थान या विश्व-ब्रह्मांड की महाशक्ति की एक लीला के सिवाय कुछ नहीं है। यह महाशक्ति परात्पर माता की वैश्व आत्मा और वैश्व प्यक्तित्व के रुप में

उपस्थित हैं। प्रत्येक लोक का वही रुप होता है जो माता ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा, अपनी शक्ति और सौंदर्य से संजोया और अपने आनंद द्वारा पैदा किया है।

परन्तु उनकी सृष्टि के अनेक स्तर हैं, भागवत शक्ति के अनेक सोपान हैं। हम जिस अभिव्यक्ति के भाग हैं उसकी चोटी पर अनन्त सत्ता, चेतना, शक्ति और आनंद के लोक हैं। उनके ऊपर माता बिना किसी आवरण के शाश्वत शक्ति के रुप में रहती हैं। वहां सब सत्ताएं अवर्णनीय पूर्णता और अटल एकता में निवास करती और विचरण करती हैं क्योंकि वहां माता उन्हें अपने बाहुओं में हमेशा ही सुरक्षित रुप से लिये रहती हैं। पूर्ण अतिमानस-सृष्टि के लोक हमारे ज्यादा नजदीक हैं। माता वहां अतिमानसिक महाशक्ति हैं, भागवत सर्वज्ञ संकल्प और सर्वसमर्थ ज्ञान की शक्ति हैं जो अपने अचूक कर्मों में हमेशा दिखायी देती हैं और उनके कर्मों में सहज रुप से सब प्रकार की पूर्णता होती है। वहां सब कर्म सत्य की ओर बढ़ते हुए कदम हैं, सब सत्ताएं दिव्य ज्योति की आत्मा, बल और शरीर हैं, वहां के सभी अनुभव प्रगाढ़ और परम आनंद के सागर, बाढ़ और लहरें हैं। लेकिन यहां, जहां हम निवास करते हैं, अज्ञान के लोक हैं, मन, प्राण और शरीर के लोक हैं जो अपनी मूल चेतना से बिछुड़ गये हैं। यह पृथ्वी उनका एक महत्वपूर्ण केन्द्र है और इसका विकास-क्रम एक सूक्ष्म और निश्चायक प्रक्रिया है। विश्व-माता इसे भी, इसके सारे अज्ञान, संघर्ष और अपूर्णता के बावजूद सहारा दिए हुए हैं। महाशक्ति इसे भी इसके गुप्त लक्ष्य की ओर आगे बढ़ाती और प्रेरित करती हैं।

अतिमानस-ज्योति, सत्य-जीवन और सत्य-सृष्टि के लोकों को ऊपर से यहां नीचे लाना है। नीचे चेतना के स्तरों की चढ़ती-उतरती दोहरी सीढ़ी के जैसी श्रेणियां हैं जिनमें चेतना पहले जड़-तत्व की निश्चेतना में गिरती है और फिर प्राण, मन और अन्तरात्मा को जीवन में खिलाती हुई आत्मा की अनन्तता में ऊपर उठती है। माता इन दोनों के बीच में अज्ञान के त्रिविध जगत की महाशक्ति के रुप में निवास करती हैं।

माता देवताओं के ऊपर रहकर जो कुछ देखती, अनुभव करती और अपने अंदर से उत्पन्न करती हैं उसके द्वारा वे धरती के विकास-क्रम का निर्णय करती हैं और उस काम के लिए अपनी सभी शक्तियां और व्यक्तित्व अपने सामने रखती हैं। वे उनकी अंश-विभूतियों को निचले लोकों में मध्यस्थता, शासन, युद्ध और विजय करने के लिए, उनके कालचक्र को बदलने और रास्ता दिखाने के लिए और उनकी शक्तियों को व्यक्तिगत और समष्टिगत मार्ग दिखाने के लिए भेजती हैं। मनुष्यों ने युग-युगान्तरों से दिव्य रुप और दिव्य व्यक्तित्व के रुप में इन अंश विभूतियों की भिन्न-भिन्न नामों से माता की पूजा की है। पर साथ ही माता जिस तरह ईश्वर की विभूतियों के मन और शरीर तैयार करके उन्हें रुप प्रदान करती हैं उसी तरह अपनी इन शक्तियों और अंश विभूतियों द्वारा अपनी विभूतियों के मन और शरीर भी तैयार करती हैं ताकि वे भौतिक जगत में मानव चेतना के भेस में अपनी शक्ति, अपने गुण और अपनी उपस्थित की कुछ किरणों को अभिव्यक्त कर सकें। इस धरती की लीला के सभी दृश्य नाटक के समान हैं और इनकी योजना और व्यवस्था माता ने ही की है जिसमें वैश्व देव उनके सहायक हैं और वे स्वयं प्रच्छन्न अभिनेता हैं।

प्रो. रमेश तिवारी 'विद्यम'

सिया

लोचन मग रामहिं उर आनीद्ध
मिथिलापति की सुन्दर बगिया
जंह फूलहिफूल खिले चहुंओरी
लेने प्रसून गए दोउ भइया
गिरिजा पूजन पहुंची किशोरी
सिया की राम सों दीठि मिली
तब गति-मति-देह, भई सब भोरी
अंतर में जब राम रमे तब
'भीतर सांवर'बाहर गोरी।।

राम

तुम पावक मंह करहुनिवासाद्ध
सीय के पीय को नेह जग्यो
तब तोरि कै पुष्प अरण्य सों लावै,
शीश पै, कण्ठ मैं, भुज कटि पायन
सुमनन गूंथि के माल पिन्हावै,
नख से शिख लौं सिय पुष्प-पगी,
तब आगे की लीला को भेद बतावै,
ऐसा पति नहिं देख्यो कहूं, जो
पुष्प पिन्हाइ के आगी लगावै।

उमेश स्मृति भवन मकरन्द नगर, कन्नौज उ.प्र. 09415472587

पी.एस.रघु
कार्यकारी अध्यक्ष

चौ. चन्द्रभान सिंह
उपाध्यक्ष

उमाशंकर रघुवंशी
महासचिव

शिववरण सिंह रघुवंशी
कोषाध्यक्ष

अजय सिंह रघुवंशी
प्रदेश अध्यक्ष

अरुण पटेल
प्रचार सचिव

मनोज रघुवंशी
प्रदेश अध्यक्ष युवा इकाई

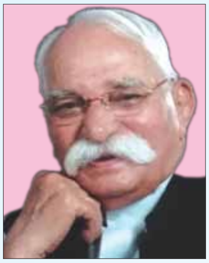
हजारीलाल रघुवंशी
अध्यक्ष

चन्दू रघुवंशी
प्रदेश महामंत्री

सुजीत मेर सिंह चौधरी
विधायक

वीरेन्द्र रघुवंशी
विधायक

श्रीराम चन्द्र चरणौं मनसास्मरामि। श्रीराम चन्द्र चरणौं वचसाभिरामि।।
श्रीराम चन्द्र चरणौं सिरसा नमामि। श्रीराम चन्द्र चरणौं शरणम् प्रपद्यै:।।

जगदीश रघुवंशी एवं रजतराम रघुवंशी
प्रदेश उपाध्यक्ष व जिला प्रभारी-धार
अभारक्षम (युवा इकाई) म.प्र.
मो. 9977001010

रघुवंशी कुलभूषण श्रीराम जी व भक्त हनुमान जी के पावन प्रकटोत्सव पर्व की हार्दिकतम् शुभकामनाएँ एवं बधाई

समाज के गौरव भीष्मपितामह दादा हजारी लालजी रघुवंशी की कांग्रेस अनुशासन समिति के पुन: अध्यक्ष बनने पर एवं चौधरी सुजीत मेर सिंह व वीरेन्द्र सिंह जी को विधायक बनने पर हार्दिकतम् शुभकामना एवं बधाइयाँ

परमेश्वर रघुवंशी
अध्यक्ष
अभारक्षम युवा इकाई,धार
मो. 9826047575

रामनारायण मुकाती

राजेन्द्र पटेल

जगदीश रघुवंशी

हरि पटेल

उमराव सिह

बलबीर

नारायण

मोहन

कमल

अमृत

The Car Care Point
Mob.: 9977001010
(A Multi Brand Car Service Center Pithampur)

कशिश बजाज
महु नीचम रोड, पीथमपुर जिला-धार ,
मो.: 9039847575
Email : kashishouto@yahoo.com

रघुवंशी समाज के सभी बंधुओं को रामनवमीं और हनुमान जंयती की हार्दिक शुभकामनाएँ एवं बधाई

कमल रघुवंशी

बलवीर रघुवंशी

श्रवण रघुवंशी

शुभम ठाकुर

प्रतिष्ठान

न्यू पीथमपुर वे ब्रिज तौल कांटा
सी.सी. पावर चौराहा, पीथमपुर

पीथमपुर सर्विस एवं वॉशिंग सेंटर
सी.सी. पावर चौराहा, पीथमपुर

परफेक्ट सर्विस एवं वॉशिंग सेंटर
सी.सी. पावर चौराहा, पीथमपुर

बलवीर कंस्ट्रक्शन, पिथमपुर
सी.सी. पावर चौराहा, पीथमपुर

रघुवंशी समाज के सभी बंधुओं को रामनवमीं और हनुमान जंयती की हार्दिक शुभकामनाएँ एवं बधाई

योगेश रघुवंशी

प्रो. मनीष क्लाथ स्टोर

पीथमपुर क्षेत्र में सभी प्रकार की संपत्तियों के
संबंध में परामर्श करें संपर्क : मो. 9826096690
बस स्टेण्ड सागौर, पीथमपुर, धार

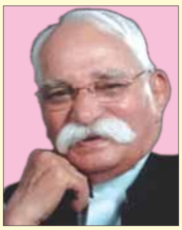

हजारीलाल रघुवंशी

उमाशंकर रघुवंशी

चौ. चंद्रभान सिंह

शिववरण सिंह रघुवंशी

अजय सिंह

चन्दू रघुवंशी

विवाह योग्य युवक-युवती

Name : Mayuri Pardeshi, Age :27, Height : 5', Date of Birth : 09th sept 1991, Place of Birth : Nandurbar(Maharashta), Educational Qualification: MBA (Finance), Professional Information- Working Company Name : WNS Global Services, Pune, Family Details- Father's Name: Dilipsing Pardeshi, Mother's Name:Nirmala Pardeshi, Horoscope Details - Sun Sign : Leo, Gotra: Barod, Contact Details, Permanent Address : Pardeshipura Near D R High School, Nandurbar, (Maharashta), Mobile No : 08329277304, 08550929581(Sister), E-mail Id : mayuripardeshi999@yahoo.in

Name : **Neha Verma,** DOB: 31 March 1993, POB: Burhanpur (MP), Zodiac: Gemini, Gotra: Mathneriya, Mama Gotra: Kaan, Caste. Kashatriya. Height. 5 Ft. 4 Inches. Educational Qualification: Pursuing PG-Mtech (Digital Communication), Graduation- B.E. (E.C.), Lanuguage Known: Hindi, English, Family Details. Lives in Joint Family. Grand Father. Late.Shree Pratapsingh Verma: Ret. Principal of Govt.H.S. School, Burhanpur. Grand Mother: Smt. Sudha Verma House wife. Father : Engg. Rajesh Verma, Mother: Smt. Vaishali Verma, Sister: Megha Verma. Address: Opp. Swaminarayan Temple, Silampura, Burhanpur (M.P.) Pin: 450331, Mob.: Mr. Rajesh Verma : 9907701119, Dr. Satish Verma : 9406637331.

Name : **Priyanka Raghuvanshi**, DOB : 26.08.1988, TOB : 2.30 AM, Place of birth : Ahmedabad Gujarat, Gotra : Saunger, Education : B.E. in Computer science from ALL Saint's College of Engineering Bhopal., Occupation : Working as senior software Engineer in Anti money laundering unit in DANSKE IT Bangalore.,Father's Name : Mr. Diwan Singh Raghuwanshi (Govt. Teacher), Mother's Name : Mrs. Asha Raghuwanshi, (House wife), Brothers name : Harsh Vardhan Raghuwanshi, Looking for a well qualified career oriented boy. , Contact details : 8792244498, Email id : priyankar2608@gmail.com

Name : **Saurabh Raghuvanshi,** S/o narendra Singh Raghuvanshi, 19/7 new palasia INDORE Occupation- software engineer, Company- Impulse technology Pune, Dob-13/4/1991, Place-indore, Time-12 night, Height-5 ft 6inch, Gotr-dadhir and rijodia, Contact no.9926949198

नामः **महेन्द्र सिंह रघुवंशी**
पिताः देवेन्द्र रघुवंशी
शिक्षा : 12वीं पास,
व्यवसाय : खेती-किसानी
गोत्र : हड़ा, मामा : बिल्धईया
जन्म : 1.11.19180
समय : सुबह 4.00 बजे, भोपाल
संपर्क : जी-8, गोयल अपार्टमेंट, गुलमोहर, भोपाल
मोबा. 8462820282, 9098947059

विवाह योग्य युवक-युवती

Name : **Dr. Shalini Raghuwanshi**
Father : Kailash Raghuwanshi
Mother : geeta Raghuwanshi
Senior Resident Vidisha Medical College
Age-27 Yrs
Mbbs & Md Peoples Medical College, Radiodiagnosis
Date of Birth : 27 May 1991
Contect : 9425431528

Name : **Rishabh Raghuwanahi**, DOB: 24 Nov 1990, Hight 5 ft 5 inches colour fair, BE Mechanical, Officer Dena Bank Surat, Gotra Khadaya, Father Dr R K Raghuwanahi (Prof. Govt Kusum P G, College Seoni Malva), 9893266575, Mother: Dr Prabha Raghuwanshi (Asstt Prof. Govt. College Seoni Malawa), Brother: Ashutosh Raghuwanahi BA LLB from NLIU Bhopal, Taujee: Ravishankar farmer, Village Somalwada Seoni Malva, G S Raghuwanshi Retd geology and mining dept Bhopal, R S Raghuwanahi, Retd Planning Commison Bhopal, N S Raghuwanahi Retd Chief Manager Canara Bank Bhopal, R S Raghuwanahi Retd, Chief Engineer irrigation dept Bhopal.

Name : **Akash Raghuwanshi**, Date of Birth : 09th November 1992, Educational Qualifications : B.E. (Computers) from MIT Pune, Job Details : Software developer at ITyX India Pvt. Ltd. , Pune, Family Details : Father : Mr. Shamsingh, Raghuwanshi, Nandurbar Mother : Mrs. Vinita Raghuwanshi, Elder sister : Mansi Raghuwanshi, Married Pursuing MS at North Eastern University , Boston, Working with a MNC in Boston, Brother-in-law : Mr. Kunal, Working with a MNC in Berlin, Germany, Contact number : +91 98234 23700, 9993590992

RNI No.MPHIN/2002/07269
रघुकलश
त्रैमासिक सामाजिक पत्रिका

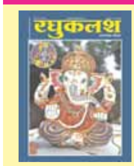

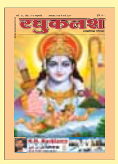

रघुकलश पत्रिका नहीं सामाजिक आंदोलन

रघुकलश के सदस्य बनकर पत्रिका द्वारा चलाए जा रहे सामाजिक आंदोलन में भागीदार बनें सदस्यता राशि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया या सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया की किसी भी निकटवर्ती शाखा में जमा करवा सकते हैं

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया बचत खाता क्र. - 63000162757
सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बचत खाता क्र.- 3107369760

आजीवन सदस्यता शुल्क रू.1500/-

हजारीलाल रघुवंशी राष्ट्रीय अध्यक्ष अखिल भारतीय रघुवंशी (क्षत्रिय) महासभा	उमाशंकर रघुवंशी प्रबंध संपादक, रघुकलश एवं महासचिव, अखिल भारतीय रघुवंशी (क्षत्रिय) महासभा	अरूण पटेल संपादक, रघुकलश एवं राष्ट्रीय प्रचार सचिव, अखिल भारतीय रघुवंशी (क्षत्रिय) महासभा

संपर्क : ई-100/41, शिवाजी नगर, भोपाल, मप्र-462016, फोन: 0755-2552432
मो: 9425010804, ईमेल: raghukalash@gmail.com, वेबसाइट: www.raghukalash.com

कठोर सेवक-धर्म के आदर्श श्री हनुमान

स्वयं भगवान शंकर अपने प्रियतम आराध्यदेव भगवान श्रीरामचन्द्रजी की सेवा के लिए अवतार लेना चाहते है, स्वाभाविक ही यह प्रश्न उठा कि सेवा-धर्म का निष्ठापूर्वक अनुष्ठान करने के लिए कौन-सा शरीर उपयोगी रहेगा? श्रीरामचन्द्र नर-रुप से प्रकट हो रहे हैं। यदि सेवक भी उन्हीं के समान नर होकर प्रकट हो तो जाति, आकार, गुण, धर्म, खान-पान, रहन-सहन में समानता करनी पड़ेगी। यह सेवा-धर्म के विपरीत है। ऐसा विचार करके शंकर ने वानर का शरीर ग्रहण किया। वानर को पकी हुई रसोई या हिंसाजन्य भोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती, उसे घर की आवश्यकता नहीं, बिस्तर, श्रृंगार-प्रसाधन आदि अपेक्षित नहीं, कहीं भी कैसे भी काम चल सकता है। हिरण्य गर्भ की समता उनके अनुराग रंजित शरीर में प्रकट है। सदाशिव एवं महाविष्णु का अनुग्रह है। रुद्र की संहार-शक्ति है, प्राणवायु का बल है, केसरी की वीतरागता है, अंजना की बुद्धि है। इस प्रकार सेवा-धर्म की समग्रता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। सब देवताओं के वाहन हो हैं, परन्तु मारुतनंदन के लिए उसकी अपेक्षा नहीं है, उनकी सर्वत्र अप्रतिहत गति है। सेवा-धर्म की पूर्णता के लिए यह सब अनिवार्य है।

न केवल श्रीरामभद्र की सेवा के लिए ही किन्तु श्रीराम भक्तों की सेवा के लिए भी वे सर्वत्र, सर्वदा एवं सर्वथा तत्पर रहते हैं। सीता, लक्ष्मण, भरत, विभीषण, सुग्रीव, वानर-भालू और वर्तमान काल के अयोग्य भक्तों की सेवा उनके द्वारा सम्पन्न होती रहती है। किसी भी स्तर के भक्त की सेवा करने में उन्हें कोई संकोच नहीं है। इतना ही नहीं, निम्न से निम्न कोटि के भक्तों को उनसे सेवा लेने में किसी प्रकार का संकोच न हो, मानों इसी कारण वे वानर-शरीर से प्रकट होते हैं। लोक-व्यवहार में ऐसा देखा जाता है कि अन्याय मार्ग पर चलने वाले बेईमान, चोर, लुटेरे भी उनकी शरण ग्रहण करके और उन्हें 'जय सियाराम!' सुनाकर लाभ उठाना चाहते हैं और उठाते हैं। हनुमानजी का शरीर प्रापंचिक अथवा भौतिक नहीं है। अनाहत ब्रहम ध्वनि रुप 'राम-राम' के स्पन्दन से उनका एक-एक क्षण, एक-एक कण एवं मन का एक-एक संकल्प अनुप्राणित है। श्रीराम की ही सेवात्मक अभिव्यक्ति हैं अंजना नन्दन। प्रत्यक्ष रुप से की गयी सेवा सबकी पहचान में आती है, परन्तु भक्त का सूक्ष्म दृष्टिकोण परोक्ष रुप से भगवान की सेवा करता है। इसका रहस्य यह है कि जब तक सेवक अपने में अज्ञान और न्यूनता का भाव धारण नहीं करेगा, तब तक वह अपने स्वामी के ज्ञान और पूर्णता को विश्व विश्रुत बनाने की सेवा नहीं कर सकता। इसके लिए आप वाल्मीकि रामायण के दो प्रसंगों पर ध्यान दीजिये।

मारुति मौन सेवक हैं। उनमें 'रुति' शब्द का अभाव ही है। ऐसा भी कह सकते हैं कि उनकी 'रुति' मा-प्रभा ःयथार्थ अनुभवः भरपूर है। उनकी रुति-वाणी भी सीता की वाणी है। उनकी वाणी में परा-पश्यन्ती का सौन्दर्य वैखरी में भी उतरता है। किष्किंधाकांड के प्रारंभ में भगवान श्रीरामचन्द्र ने स्वयं उनके वाक्य विन्यास की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। वे एक आचार्य के समान लंका में प्रवेश करते हैं। समुद्र उनकी यात्रा में व्यवधान नहीं। उन्हें विश्राम की आवश्कयता नहीं। माया-छाया का विघ्न प्रभावित नहीं कर सकता, स्वर्ण लंका प्रलोभित नहीं कर सकती। विवेक के समान वे शांतिमयी सीता को ढूंढ निकालते हैं और मानो प्रबल वैराग्याग्नि के द्वारा स्वर्ण लंका को भस्म कर देते हैं। यह सब प्रत्यक्ष एवं भावगर्भित पराक्ष रुप से भगवान की सेवा है। उनकी सेवामयी दृष्टि उस समय पराकाष्ठा पर पहुंच जाती है, जब वे सीता माता से प्रार्थना करते हैं कि 'आप हमारी पीठ पर बैठ जाइये, मैं अभी आपको श्रीराम के पास ले चलता हूं। आपका विरह-दुखः कुछ क्षणों में ही मिट जायेगा।' इसके उत्तर में जनकनंदिनी सीता के जो प्रखर पातिव्रत्य के उद!गार हैं वे अत्यन्त मर्मस्पर्शी हैं। रामायण-निर्माण के सम्पूर्ण प्रयोजन का दर्शन वही होता है। श्रीजानकीजी कहती हैं कि 'मैंने अपने जीवन में जान-बूझकर कभी परपुरुष का स्पर्श नहीं किया है। रावण ने बलात् मुझे पकड़ कर रथ पर बैठाया- यह सही है। परन्तु उस समय मैं विवश थी। तुम मेरे पुत्र हो तो क्या हुआ, मैं जान-बूझकर तुम्हारा भी स्पर्श नहीं कर सकती। जब मेरे स्वामी समुद्र पार करके आयेंगे, शत्रुओं पर विजय प्राप्त करेंगे और अपने पौरुष से मुझे ले जायेंगे, तब उनका यश बढ़ेगा, चोरी से भागकर जाने में उनकी क्या कीर्ति बढ़ेगी ?

सारा रामायण श्रीसीताजी का उदार एवं उदात्त महनीय चरित्र है। यदि हनुमानजी ऐसे प्रसंग में अपनी चंचलता अथवा अपने उथले विचार प्रकट न करते तो सीताजी के अमर वचन एवं प्रेमोद्गार उन्हें कैसे मिल सकते थे। आप सूक्षमता से देखें, इस वचन के द्वारा जनता के हृदय में जननी के प्रति सद्भावना की कैसे निरतिशय प्रतिष्ठा जमी है और भगवान श्रीरामचन्द्र के प्रेमाकुल हृदय को कैसा निरुत्तर शांतिदायी आश्वासन प्राप्त हुआ है, जो किसी दूसरे प्रकार से प्राप्त नहीं हो सकता था। सच है, सीता-राम दोनों की ऐसी सेवा हनुमानजी के अतिरिक्त और कोई नहीं कर सकता था।

अब दूसरा प्रसंग देखें। श्रीसीताजी के हृदय में कितनी करुणामयी उदात्त एवं उदार वृत्ति है, भगवान श्रीराम के प्रति कितना

अगाध एवं अबाध प्रेम-रत्नाकर छलक रहा है, यह श्रीहनुमानजी के कारण ही अभिव्यंजना प्राप्त कर सका है। लंका विजय के पश्चात श्रीरामचन्द्र के शुभ-संदेश लेकर केसरी किशोर अशोक वन में जाते हैं। वहां वे एक ऐसी भूमिका या अभिनय प्रकट करते हैं, जो सचमुच उनके स्वरुप के अनुरुप नहीं है। वे कहते हैं- 'माँ! आप आज्ञा दें तो आपको सताने वाली इन निशाचरियों को इनके किए का फल चखा दूं-रौंद दूं, घसीट दूं, नोच दूं, मार डालूं। केवल आपके संकेत भर का विलम्ब है।' निश्चय ही हनुमानजी के ये वचन श्रीसीताजी के हृदय को निवारण रुप से प्रकट होने का अवसर देने के लिए ही हैं। श्रीजानकी माता के हृदय का यह तात्कालिक अवतार विश्व मानव के लिए प्रेरणा का शाश्वत स्त्रोत रहेगा, इसमें संदेह नहीं। वे कहती हैं- ''हनुमान! संसार में ऐसा कौन प्राणी है जिसने कभी न कभी कोई अपराध न किया हो। सभी अपराधी हैं- 'न कश्चिन्नापराध्यति।' मैंने भी लक्ष्मण के प्रति अपराध किया है, तुमने भी लंका के निरपराध बालक-बालिकाओं को पीड़ा पहुंचायी है। आर्य पुरुष का कार्य दंड देना नहीं है, करुणा करना है- 'कार्य कारुण्यमार्येण।' करुणा में पापी-पुण्यात्मा का एवं शुभ-अशुभ का विचार नहीं होता। तुम जो कुछ करने के लिए कह रहे हो, उससे क्या श्रीरामचन्द्रजी या उनके भक्तों का यश बढ़ेगा ?' श्रीजानकीजी के वचनों पर आप ध्यान दें। ये करुणा-समुद्र की छलकती हुई लहरें तो हैं ही, भक्तों के लिए एक मार्ग-निर्देश भी हैं। उन्हें अपने कर्तव्य का निश्चय करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उससे श्रीराम का ओर उनके भक्तों का यश बढ़े। यदि उनके कर्तव्य-निश्चय में यह दृष्टि नहीं है तो उनके भक्तिभाव की अपूर्णता ही माननी पड़ेगी।

सौन्दर्य की दृष्टि से जब हम हनुमानजी को देखते हैं तो वे शिव स्वरुप हैं, हृष्ट-पुष्ट एवं बलिष्ठ हैं, परन्तु आकृति की दृष्टि से देखें तो लोमश शरीर, हाथ-पॉव, चिबुक भी टेढ़ा, रुप में लंका-दहन का प्रभाव। उनके प्रत्येक क्रियाकलाप से श्रीराम का ही महत्व प्रकट होता है। वे किसी को अपना भक्त बनाकर श्रीराम का भक्त बनाते हैं। श्रृंगार-रस की सेवा में दासी को भले ही सौन्दर्य-माधुर्य की अपेक्षा हो, परन्तु दास्य-रस की सेवा में स्वशरीर के लिये सेवोपयोगी प्रसाधन की ही अपेक्षा होती है, अधिक नहीं। उनका ब्रह्मचर्य भगवान श्रीरामचन्द्र के लिए कितना सेवोपयिक है- यह थोड़े ही विचार से ज्ञात हो जायेगा। सीताजी के प्रति प्रेम संदेश का आदान-प्रदान, रावण के अन्तःपुर में प्रवेश और अवध धाम के राजमहल में अनवरत सेवा का अवसर अखंड ब्रह्मचर्य के बिना कैसे प्राप्त हो सकता है। प्रीतिपूर्ण दास्य अथवा प्रेमानुभाव रुप सेवा में अपनी जाति का उत्कर्ष बाधक हो जाता है। भगवान श्रीरामचन्द्र को सेवा की आवश्यकता हो और सेवक अपने व्यक्तिगत कर्तव्यों के पालन में संलग्न हो, स्नान, संध्यावंदन, नित्यकर्म आदि में मग्न हो, उसकी ऊंची जाति का अभिमान छोटी-मोटी सेवा करने में विघ्न करता हो तो यह सेवक का दुर्भाग्य ही समझना चाहिये। अपने खान-पान के लिये पृथक व्यवस्था करनी पड़ती हो,? यदृच्छया प्राप्त फल-फूल-मूल आदि से काम न चल जाता तो तो निश्चय ही प्रेमरस की सेवाधारा के अकुण्ठ प्रवाह में प्रतिबन्ध आ जायेगा। अतएव सेवा-धर्म केवल अनन्य सेवा के लिये होता है, उसमें स्वसेवा नहीं होती, अन्यसेवा भी नहीं होती। स्वामी की सेवा में जो सहायक सेवा होती है वह भले ही अपनी हो या परायी, सेवक को स्वीकार है। इसके अतिरिक्त नहीं। श्रीहनुमानजी ने उत्कृष्ट जाति के समाश्रयण का परित्याग करके इस भाव को स्पष्ट कर दिया।

पुराणों में उल्लेख मिलता है कि बाल्यावस्था में हनुमानजी का बल अप्रतिभट था। कोई उनके क्रियाकलाप में बाधा नहीं डाल सकता था। चाचंल्य जाति सिद्ध था। सूर्य तक को निगल जाने का प्रयास किया। ऋषियों के लिए आवश्यक फल-मूलदायक वन वृक्ष का विध्वंस किया। ऋषियों ने शाप दिया -''तुम्हें अपने बल का विस्मरण हो जाय।'' यह शाप नहीं, ज्ञानदान है। इसके कारण अपनी सगुणता और सबलता बाधित हो गयी। उपाधि मूलक बल का तिरस्कार हो गया है। वे इतने बलिष्ठ होने पर भी सामान्य वानर के समान रहने लगे। सेवक का बल स्वामी को सेवा के लिए प्रकट होने पर ही सार्थक होता है। जब समुद्र-लंघन की आवश्यकता पड़ी, जाम्बवान ने बल का स्मरण करा दिया, बस क्या था बात की बात में काम पूरा हो गया। श्रीहनुमानजी के मन में जाम्बवान के द्वारा उद्वेलित बल में भी 'यह मेरा बल है'- ऐसी अभिमति नहीं हुई। उनकी दृष्टि में सब बल स्वामी का बल है, परमेश्वर का बल है। वे न केवल अपने बल-प्रकाश को प्रत्युत रावणादि के बल प्रकाश को भी भगवान का ही बल समझते हैं। गोस्वामीजी ने रावण के सम्मुख 'जाके बल लवलेस ते' और भगवान श्रीराम के सम्मुख 'तव प्रताप बल नाथ' कहकर इसी भाव की अभिव्यंजना की है। उनकी अबाधमयी दृष्टि में अपना आत्मा निर्बल और निर्गुण ही है। विशेषतायें तो सब परमेश्वर के बल की ही हैं।

भगवान श्रीरामभद्र ने मारुति को क्या संदेश देकर सीता के पास भेजा था- यह किसी को ज्ञात नहीं था। यदि यह प्रकट कर दिया जाता कि हनुमान के द्वारा ही संदेश भेजा गया है तो दूसरे वानर अपने कार्य में उदासीन हो जाते एवं अपनी अयोग्यता का मनन करके सैन्य संग्रह में भी उत्साहीन हो जाते, परन्तु अपने स्वामी के मन्त्र को, संदेश को गुप्त रखने की अदभुत क्षमता महावीर में देखी गयी। साथ ही स्मृति ऐसी कि करुणानिधान रघुनंदन का संदेश उन्हीं के शब्दों में ज्यों का त्यों बोला गया- 'प्रेम का तत्व श्रीराम का मन ही जानता है और वह निरन्तर सीता के पास ही रहता है' निश्चय ही सेवक की स्मरण-शक्ति कैसी होनी चाहिये, इसका यह एक उत्तम

आदर्श है। सेवक को अपने स्वामी का कार्य संपन्न किये बिना स्वयं किसी की सेवा स्वीकार नहीं करना चाहिये- यह मैनाक के प्रसंग में स्पष्ट है। 'राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहां बिश्राम।'- यह एक अमरवाणी है। नागमाता के मुख से दुगुना अपने आकार को बनाते जाना और उसका मुंह अतिशय बड़ा हो जाने पर छोटे आकार से उसमें प्रवेश करके निकल आना- यह बुद्धिकौशल है। स्वर्ण लंकिनी के प्रलोभन निर्लोभ और उसके भय-प्रदर्शन में निर्भय, यह सेवा का ही धर्मदर्शन है।

शत्रु की नगरी में प्रविष्ट होने के बाद केवल आज्ञा पालन करके लौट आना- इतना ही सेवा का कर्तव्य नहीं होता। अभी तक शत्रु असावधान है, उसके यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र, गुप्त नहीं रखे गये हैं। हनुमान की प्रतिभा ने उस समय श्रीराम की विजय के लिये जितने मार्ग थे, सब प्रशस्त कर दिये। यन्त्र ध्वस्त कर दिये, ब्रह्मास्त्र आदि के मंत्र ज्ञान स्पष्ट हो गये, शासन तंत्र भयभीत हो गया, सैनिकों के हृदय में खलबली मच गयी। श्रीराम का एक गुप्तचर इतना प्रभावशाली है तो वे और उनकी सेवा कितनी सामर्थ्यशाली होगी? उसकी क्षमता के पारावार को कौन पार कर सकता है। शत्रुओं के हृदय में इस भय का संचार कर देना बलबुद्धिनिधान पवननंदन के ही वश की बात थी। उनमें प्रतिभा के साथ शांति है, बुद्धि के साथ आज्ञापलन है, स्मृति के साथ गोपन है, बल के साथ नियंत्रण है, शारीरिक पुष्टि के साथ ब्रह्मचर्य है, साथ ही जीवन का एकमात्र उद्देश्य भगवान श्रीरामचन्द्र की सेवा है।

हनुमानजी में सदाशिव का अनुग्रह, हिरण्य गर्भ की सत्य संकल्पता, विष्णु की पालनी शक्ति, ब्रह्मा की समता, रुद्र की संहार शक्ति एवं अहंकार से मुक्त ब्रह्मभाव अत्यन्त स्फुट दृश्यमान है। इसी से उनकी प्रत्येक क्रिया हितभाव से परिपूर्ण है। जो मनुष्य लोक-व्यवहार में प्रयत्नपूर्वक अपनी स्वार्थपूर्ति के कर्तव्यों में ही संलग्न रहता है वह परोपकार के लिए अपनी शक्ति वृत्तियों का ठीक-ठीक उपयोग नहीं कर सकता। परन्तु जिस सत्पुरुष ने संसार के सम्पूर्ण मलों का परित्याग कर दिया है और अपनी पूर्णता का बोध प्राप्त कर लिया है उसके हृदय में चित्स्वभाववश जो इच्छा का उदय होता है वह केवल लोकोपकार की दृष्टि से कर्तव्य है उन्हीं के लिये होता है-यह अत्यन्त स्पष्ट है।

कल्याण से साभार

स्फुट

डॉ. देवकीनंदन जोशी

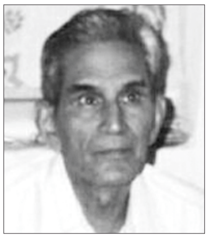

उम्र के साथ चरण, दौड़ नहीं पाते हैं
राह का साथ मगर, छोड़ नहीं पाते हैं
श्रेय चरणों को नहीं, श्रेय है तूफानों को
डूबती नाव को जो, मोड़ नहीं पाते हैं।
नाव मत खोलो जरा, ज्वार को चढ़ जाने दो
गीत मत छेड़ो अभी, दर्द तो बढ़ जाने दो
खुद ब खुद महकेगा, कभी दर्द का चन्दन
बाग हरियल है जरा, और उजड़ जाने दो।
प्रीति को जीत का अरमान नहीं होता है
प्यार की हार में नुकसान नहीं होता है
चॉद को देख तरी खेते चलो मल्हाओं
प्यार में ज्वार है तूफान नहीं होता है।
प्यार की बाजी में बढ़कर,
शौक से हारा जाता है,
प्यार नशा ही ऐसा है,
पी पी के उतारा जाता है,
नींद नहीं आती, पर स्वप्न अराजक हो जाते हैं
वो नींद चुराते, चोर मगर हमको पुकारा जाता है।

संपर्कः मो.8720031001,
फोन-0755–2557428

डॉ. स्वर्ण सिंह रघुवंशी की लघुकथाएं

कलयुग में एक मॉं ने एक साथ पांच नवजातों को जन्म दिया। उन पांच में से चार लड़के और एक कन्या थी। जन्म के बाद माता का स्वर्गवास हो गया। उनके पिता ब्रह्मा ने ही अपने बच्चों का लालन-पालन किया। पिता ने उनका नामकरण इस प्रकार किया- बड़े पत्र का नाम धन कुमार, दूसरे नम्बर वाले का रुपकुमार, तीसरे बाला लक्ष्मीपति, चौथे का नाम गोपाल और कन्या का नाम यमी रखा।

बड़े होकर उन्होंने अपने नाम और रुप के अनुसार पद पाये। बड़ा भाई उस राज्य का सबसे धनी व्यक्ति बना। रुपकुमार सुंदरता के कारण फिल्म जगत का जाना माना और श्रेष्ठ नायक बना। लक्ष्मीपति पूरे विश्व का सर्वश्रेष्ठ धनी व्यक्ति कहलाने लगा। गोपाल ने गायों से प्रेम किया और गौ उत्पाद का निर्माण कर देश में प्रथम नाम पाया। उन भाइयों की इकलौती बहन यमी भी एक जाने माने धनकुबेर की पत्नरी बन गयी।

युवा अवस्था में पांचों भाई बहन ने आपसी सहमति से यह निर्णय कर लिया था कि हम एक-एक मिनिट के अन्तर से पैदा हुए हैं तो अपना जन्मदिन भी एक-एक दिन के अंतर से ही मनायेंगे। उनकी बहन यमी बहुत ही कुशाग्र थी। उसके कथनानुसार ही उन्होंने दीपावली के पंचोत्सव को अपना जन्मदिन मनाया। बड़े से प्रारम्भ कर छोटी बहन के जन्मदिन पर सभी मिलकर खुशियां मनाने का अन्त कर देते हैं।

■

फेसबुक

राजू की मॉं गांव से आकर शहर में रह रही थीं। अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाने के उद्देश्य से ही वह शहर में किराये के मकान में रहकर बच्चों को पढ़ा रही थीं। वह स्वयं शिक्षित नहीं थीं किन्तु शहर के माहौल ने उसे अंग्रेजी के चंद शब्दों का अर्थ समझा दिया था। बच्चे भी घर में अंग्रेजी में जो बोलते राजू की मॉं उसे समझ जाती थीं।

कुछ दिनों से राजू अवकाश के दिनों में मोबाइल लिए घंटों बैठा रहता था। यह बात उसकी मॉं देख रही थी, मॉं ने राजू से एक बार पूछा तो वह अपनी पढ़ाई करने की बात कह देता था। आज उसकी मॉं ने थोड़े कड़े लहजे में राजू से कहा- ''क्यों रे राजू तू इस मोबाइल में कौनसी किताब पढ़ता है, तो राजू ने तपाक से उत्तर दिया- ''अम्मा मैं फेसबुक पढ़ रहा हूं।

'' राजू का उत्तर सुन उसकी मॉं अवाक रह गई। उसे यह तो पता था कि पढ़ाई की किताबों को बुक कहा जाता है परन्तु फेसबुक किस विषय की किताब होती है यह वह नहीं समझ पा रही थी। इस उहापोह में दिन बीत गया। जब सांझ को मोहल्ले की औरतें इकट्ठी हुईं तो राजू की मॉं ने उनसे पूछा कि बहनजी मुझे यह तो बताओ कि यह फेसबुक कौन से विषय की किताब होती है जो मोबाइल से पढ़ी जाती है। राजू की मॉं की बात सुनकर सभी औरतें हंस पड़ीं।

उन्हें हंसता देख राजू की मां को बड़ा आश्चर्य हुआ और खीज कर उसने उन्हें चुप कराकर कहा- ''देखो बहनों, मैने आज अपने बेटे से पूछा था कि तू मोबाइल में कौनसी किताब पढ़ता है तो उसने उत्तर में फेसबुक नाम लिया था। बुक का मतलब तो जानती हूं पर फेस का क्या मतलब होता है यह मुझे पता नहीं। इसी कारण तुमसे पूछा था....मेरी बात पर तुम क्यों हंसी इसका मतलब बताओ।''

राजू की मॉं की बात सुन सभी औरतें चुप हो गयीं। उनमें से एक ने राजू की मां को वह घटना सुनाई जब मिश्राजी की लड़की एक लड़के के साथ भाग गयी थी। उस लड़के ने भी मिश्रा जी की लड़की से दोस्ती मोबाइल से इसी फेसबुक के माध्यम से की थी। पूरा वाकया सुन राजू की मॉं उठकर सीधी अपने घर गयीं और राजू को आवाज देकर पास बुलाकर कहा- ''बेटा, आज मुझे पता चल गया कि फेसबुक क्या होती है...... अब यदि तूने मोबाइल से हाथ लगाया तो तेरी खैर नहीं....पढ़ाई बन्द कराकर सीधे गांव चली जाऊंगी और फिर तू भी गांव में खेती ही करना, समझे।'' मॉं के तेवर भांप राजू को भी समझ आ गया कि अब मॉं की बात मानने के अलावा और कोई चारा नहीं है। उसने आज से फेसबुक नहीं देखने की कसम खाकर मॉं का गुस्सा शान्त किया।

डॉ. स्वर्णसिंह रघुवंशी की कविताएं

मृत्युपथ पर

मृत्यु पथ पर
जब मैं कदम बढ़ाता हूं
तो पैरों की चाप नहीं होती
अनसुनी स्वर लहरी
और उस पर होता सफर अकेला
एक विचित्र अनुभूति
अन्तः सुख की।
मृत्यु पथ पर
शून्य शून्य और मैं
सुख की दिव्य ज्योति
छिटकता भौतिक प्रकाश
शान्त-शैय्या
मृत्यु पथ में-
मृत्य पथ है।

■

पति-पत्नि और वो

पति, पत्नि और 'वो'
कहने को कह दो
साधारण है शब्द 'वो'
जो जुड़ा है-
एक के बाद एक, निरन्तर
असीमित श्रृंखलाओं में
गहरा अर्थ लिये
एक जंजीर की तरह
अनगिनत, कई कड़ियों-सा

■

पत्र

श्रीमती जी-
कुछ दिन और मायके में रहियो
ताकि मेरी अतृप्त लेखनी
वर्षों की प्यास बुझा सके
और सृजन की राह में
कोई रुकावट न आ सके।
बंद कमरे में।
क्योंकि-
घर के राशन में वेतन की तरह
लेखनी की स्याही भी चट हो जाती है
और
फटे कुर्ते की जेब से
असहाय-सी लटकती लेखनी
इधर-उधर बगलें झांकती है
तुम्हारे संग रहने पर
ठीक मेरी तरह।
प्रिये-
तुम्हें आशीष, बच्चों को प्यार
घर के बुजुर्गों को लाख दुआयें
हृदय से भेज रहा हूं
मायके में रहकर,
सहर्ष स्वीकार करना।
और
विरह के दिन खुशी से काटना
फिर आकर
पूरा हिसाब छांटना
मैं वैसा ही हृष्ट-पुष्ट
विश्वास न हो, तो आने पर देखना
हाँ-
थोड़ा फूल अवश्य गया हूं
ठीक लेखनी की तरह।

■

काल चिन्तन

परिस्थिति की विषमताओं
और
काल के कुचक्र से जूझता
आज का हर युवक
गरीबी, भुखमरी
और बेरोजगारी से त्रस्त
एक प्रश्नचिन्ह बना
त्रिशंकु की भांति
अपने ही सीने पर उगे
अवसादों के शूल की
असह्य वेदना
कुण्ठाओं में घोलकर
चुपचाप पी रहा है।
■

शून्य संकेत

एक–
दिशा के भाल पर फैली
अरुण-प्रभा चुपके से
तुम्हें
शून्य दस्तक दे रही
सम्हलो
समय बड़ा चतुर है
जो
चुपचाप खिसक जाता है
उठो
तुम समय के हस्ताक्षर हो-ए नवयुवक।

दो–
तुम्हारा शरीर
अनादिकाल से
घड़ी की तरह
दिन रात, कांटों में
चक्कर लगा रहा
और मन-
पेण्डुलम की भांति
फंसा है सीमित दायरे में
कैदी की तरह
फिर भी
तुम चुपचाप हो- ए नवयुवक।
■

मेरी आशा

मेरी आशा है
म.प्र. का चुनाव !
एक होता है ''पक्षी''
पक्षी के पंख होते हैं
पंखों से वह 'आवारा सा' उड़ता है
चुग्गा चुनता है
उसे सिर्फ चुग्गा चाहिए
अपने बच्चों को वह
सिर्फ 'चुग्गा' खिलाता है
अन्य को नहीं।
एक होता है ''विपक्षी''
विपक्षी के पंख नहीं होते
इसलिए विपक्षी बनकर
कातर निगाहों से
आसमान छूता है
और
बेचारा विपक्षी
सबको गालियां दे
आंसू बहाता है
बाकी सभी दल
दलदल में फंसे रहते हैं।

संपर्क : 9425759098

नाम वीर हनुमान का

आचार्य भगवत दुबे

संकट टाला करते हनुमत, सच्चे श्रद्धावान का
भूत पिशाच भागते सुनकर, नाम वीर हनुमान का।
वानरपति सुग्रीव और रघुपति को मित्र बनाया था
सिन्धु लांघकर जगज्जननि सीता का पता लगाया था
लंका जला, बजाया डंका, रघुवर के जयगान का
भूत-पिशाच भागते सुनकर नाम वीर हनुमान का।
लक्ष्मण मूर्छित हुए आप तब द्रोणागिरि ले आये थे
संजीवनी बूटी देकर, लक्ष्मण के प्राण बचाये थे
सच्चा सेवक नहीं आपसा है कोई भगवान का
भूत-पिशाच भागते सुनकर नाम वीर हनुमान का।
नागपाश में बंधे राम तब तुरत गरुड़ को लाये थे
मायापति के माया-बंधन हनुमत ने कटवाये थे
वरद हस्त है इनके ऊपर रघुपति कृपानिधान का
भूत-पिशाच भागते सुनकर नाम वीर हनुमान का।
तुलसी जब घिसते थे चन्दन दो बच्चे आ जाते थे
तुलसी से चंदन लगवाते, बाबा जान न पाते थे
मिट्ठू बन परिचय करवाया तुलसी को भगवान का
भूत-पिशाच भागते सुनकर नाम वीर हनुमान का।
पवनपुत्र को स्वयं राम ने दी ऐसी प्रभुताई थी
संकट मोचन की पदवी बजरंगबली ने पाई थी
नाम-प्रताप विदित है जग में, हनुमत ज्ञान निधान का
भूत-पिशाच भागते सुनकर नाम वीर हनुमान का।

पिसनहारी-मढ़िया के पास,
जबलपुर म.प्र. मोबा. 9300613975

लोग फिर उन्हें भूल जाते हैं !

अंश रघुवंशी

जब पिता के संग होते हैं
तब डर भूल जाते हैं ।
चाहे कोई भी इम्तिहान हो
सबको धूल चटा जाते हैं।
मॉं की दस आवाजों को भी
अनसुना कर जाते हैं।
पिता की एक आवाज में
दौड़े चले आते हैं।
परीक्षा के समय में जब
पाठ समझ नहीं आते हैं।
तब गणित, भूगोल, विज्ञान
पिता ही समझाते हैं।
उंगली पकड़कर हमें चलना सिखाते हैं
हमें अपने कंधों पर बैठाते हैं।
हम जो चाहें हमें वो दिलाते हैं
पर लोग फिर उन्हें भूल जाते हैं।
कभी हमें समझाते हैं
तो कभी डांटते फटकारते हैं।
ऐसा नहीं कि प्यार नहीं करते
पर उनके पयार के अंदाज अलग होते हैं।
आफिस से जब थक हार कर
घर चले आते हैं।
हमारे चेहरे पर मुस्कान देख
मस्त मगन हो जाते हैं।
हमारी पहली कमाई से जब
उनके लिए उपहार हम लाते हैं।
हमें अपने पैरों पर खड़ा देख,
पिता तृप्त हो जाते हैं।
एक उम्र बाद जब
हमें छोड़ जाते हैं।
उनका अंतिम संस्कार कर
लोग फिर उन्हें भूल जाते हैं।।

ग्राम तरावली, अशोकनगर
मोबाइल-8889780635

निन्दा, कारण और निवारण

जगन्नाथ सिंह रघुवंशी मैयर

पर निन्दा हम क्यों करते हैं? यह प्रश्न क्या कभी हमने पूछा है अपने आपसे। इसके दो कारण हैं- एक तो यह कि निन्दा करने में रसानुभूति होती है और दूसरे दिल का गुवार निकल जाता है। इस रसानुभूति का कारण है हमारे हृदय की ओछी वृत्ति। निन्दा में हमें तभी तक रसानुभूति होती है जब तक वह दूसरे की होती है। यदि कहीं कोई हमारी ही निन्दा करने लगे तब तो हमारी त्यौरी चढ़ जाती है। सही भी बात हो तो हम सफाई देने लग जाते हैं कि दोष और कमियां किसमें नहीं होतीं, कौन है दूध का धोया? पर यह पैमाना हम दूसरों पर नहीं लगाते। दिल का गुवार की बात तो प्रतिशोध की बात है। जब हम सामने जाकर किसी का विरोध नहीं कर पाते तो पीठ पीछे उसकी निन्दा करके दिल का गुवार निकाल देते हैं, यह कोई अच्छी बात तो है नहीं।

निन्दा के और भी कितने ही कारण हैं। हमारा साथी, हमारा पड़ोसी हमसे पीछे रहने वाला या बराबरी का व्यक्ति यदि कभी हमसे आगे निकल जाता है, रुपये-पैसे में, धन-सम्पत्ति में, पद-प्रतिष्ठा में, तो तुरन्त ही हमारे भीतर ईर्ष्या की आग सुलगने लगती है और उसी से निन्दा की लपटें निकल पड़ती हैं। हम उसे अपने से छोटा सिद्ध करने के लिए तरह-तरह की बातें कह उठते हैं। निन्दा कर झूठ का अम्बार लगा देते हैं।

अपनी प्रशंसा किसे अच्छी नहीं लगती। मनुष्य अपने हाथ अपनी पीठ ठोंकने में भी पीछे नहीं रहता। उसमें सापेक्षता जुड़ते ही दूसरों की निन्दा चालू हो जाती है। विद्यार्थी जिस प्रकार अपने सहपाठी को अच्छे नम्बर पाते देख कह उठते हैं कि उसने नकल की है और परीक्षक के पास सिफारिश पहुंचाई है। उसी प्रकार हम भी दूसरों को बढ़ते देख ऐसे ही कुछ बहाने निकाल लेते हैं। हमारे स्वार्थ में बाधा पड़ती है, हमारी उन्नति में अवरोध आता है, दुनिया हमारी इच्छा के अनुकूल नहीं चलती तो बस हम सारा दोष दूसरों के मत्थे मढ़ने लगते हैं। हमारी महत्वाकांक्षा पूरी नहीं हो पाती, हमारा विरोधी सफल हो जाता है बस हम उसकी निन्दा चालू कर देते हैं। हमारी मित्र मंडली में मकान, दुकान, धन, पास-पड़ोस की जैसे वार्ता चल पड़ती है कि बस निन्दा का चक्र भी चालू हो जाता है। उसमें हमें भी रस आता है और दूसरों को भी। कभी-कभी शुद्ध विनोद के साथ भी निन्दा जुड़ जाती है और फिर वह आगे बढ़ती चली जाती है। ऐसे ही एक नहीं अनेक कारण हैं निन्दा के।

निन्दा से तात्कालिक लाभ कुछ लोगों को दिख सकता है। निन्दा से तो हमें प्रत्यक्ष लाभ हो सकता है, अच्छी नौकरी मिल जाती है, नौकरी में तरक्की हो जाती है, हमारा मालिक हमसे प्रसन्न रहता है, हमारी आमदनी बढ़ती है, चुनाव में खड़े होने पर हमें अच्छे वोट मिलते हैं, हमारा पद और सम्मान बढ़ता है? जिस सौदे में हमें फायदा ही फायदा है उसे हम क्यों छोड़ दें। आज के जमाने में निन्दा से बहुतों को लाभ दीखता है पर वस्तुता वह लाभ है नहीं। निन्दा का प्रभाव दो-चार दिन, दो-चार सप्ताह ही नहीं बर्षों तक टिकता है परन्तु सभी धर्मों में निन्दा की निन्दा की गयी है। रामचरित मानस में गरुण जी ने कागभुशुण्डिजी से प्रश्न किया है-

कवन पुन्य श्रुति विदित विशाला। कहहु कवन अघ परम कराला।।

भुशुण्डिजी ने उत्तर दिया-

परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा। पर निन्दा सम अघ न गरीसा।।

अर्थात अहिंसा से बढ़कर कोई पुण्य नहीं, परनिन्दा से बढ़कर कोई पाप नहीं। भुशुण्डिजी इतना ही कहकर चुप नहीं हो गये। उन्होंने निन्दकों की श्रेणी यानी विभाजन भी कर दिया कि कौन प्रथम श्रेणी, कौन द्वितीय श्रेणी और कौन तृतीय श्रेणी में है तथा उन्हें चित्रगुप्त के दरबार में कैसे और क्या दंड मिलता है। उन्होंने बताया कि किस-किस योनी और किस नरक में जाना पड़ता है।

हर गुर निंदक दादुर होई। जन्म सहस्त्र पाव तन सोई।।

द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ वायस सरीर धरि।।

सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरब नरक परहि ते प्रानी।।

होहिं उलूक संत निंदा रत। मोह निशा प्रिय ग्यान भानु गत।।

सब कै निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होई अब तरहीं।।

अर्थात्-निंदा आपने की नरक का दरवाजा खुला। हरि की निंदा हो या हर की, गुरु की निंदा हो या गोविन्द की, सुर की निंदा हो या भूसुर की, वेद-शास्त्र की निंदा हो या संत महात्मा की अथवा किसी की निन्दा हो- नरक तो भोगना ही पड़ेगा और नाना प्रकार की योनियों में चक्कर भी लगाना पड़ेगा। कोई मेंढक बनेगा तो कोई

कौआ, कोई उल्लू बनेगा तो कोई चमगादड़।

आत्मोन्नति चाहने वाले की सारी प्रगति ठप हो जाती है निन्दा से। व्यावहारिक जगत में निन्दा से बड़ी हानि होती है। निन्दा से मुक्त होने का उपाय है, कठोर प्रयत्न दृढ़ संकल्प और सतत जागरुकता।

१-आत्म निरीक्षण- दूसरों की बुराइयां ढूंढने की अपेक्षा हम अपनी बुराइयां खोजें, अपने दोष देखें। राई से दोष को पर्वत मानकर उसे मिटाने का प्रयत्न करें, पराये दोष क्या देखूं कमी क्या मुझमें दोषों की। आत्म निरीक्षण से पता चलेगा कि मनुष्य कब-कब और कैसे-कैसे पर निन्दा करता रहता है तथा अपने दोषों पर पर्दा डाले रहता है। तब उसकी वृत्ति बदलेगी। स्मरण रखना चाहिये-

तेरे भावै जो करैं भलौ बुरो संसार।

नारायण तू बैठके अपनो भवन बुहार।।

हम अपना मकान साफ करने में लगें तो फिर हमें निन्दा करने का अवकाश ही नहीं मिलेगा।

२- श्रम-निष्ठा- अपने को रात दिन श्रम के काम में, ठोस काम में, रचनात्मक काम में लगाये रखना निन्दा से मुक्ति पाने का एक अच्छा उपाय है। ''खाली दिमाग शैतान का कारखाना''। फालतू समय में ही निंदा आदि की खुराफात पनपी है।

३- वाणी पर नियंत्रण- मन लाख फड़फड़ाये किन्तु मुंह से निंदा के शब्द निकलने ही नहीं देना। जुबान बेलगाम हो तो एकदम चुप हो जाना, शान्त हो जाना, मौन हो जाना।

४- आंखों पर नियंत्रण- देखकर और पढ़कर भी मनुष्य निंदा में प्रवृत्त होता है। इसलिए वान भी उत्तम हो और हृदय भी उत्तम हो। आंखों के रास्ते पराये दोष भीतर न जाने पायें। निंदा परक साहित्य, लेख, पत्रिकायें पढ़नी ही नहीं चाहिये। कोई चीज सामने आ ही जाये तो आंखें बंद कर लें।

५- श्रवण पर नियंत्रण- कान ही पाप को भीतर ले जाया करते हैं। जो आदमी 'पर अघ सुनइ सहस दस काना।' वह निंदा करेगा ही। कान है प्रभु की चर्चा सुनने को, पर-दोष चर्चा सुनने को नहीं। मुंह बंद रखो, आंख बंद रखो, कान बंद रखो। गांधी जी के तीन बंदर यही तो सिखाते हैं। निंदा से बचने की यह तरकीब अच्छी है।

६- गुण दर्शन- हर व्यक्ति में वह चाहे जैसा हो बुरे से बुरा और नीच से नीच क्यों न हो- कुछ न कुछ गुण होते ही हैं। उन्हें खोजकर उनकी प्रशंसा करने की आदत डालें। यह दोष-दर्शन रोकने की रामबाण दवा है।

७- रोना- श्रीरामकृष्ण परमहंस का नुस्खा-ईश्वर से रो-रो कर प्रार्थना करना कि भगवन मुझे पवित्र बनाओ, विकारमुक्त बनाओ, निर्विकार बनाओ, रो-रो कर हृदय को निर्मल बनाना पर-दोष दर्शन से बचने का उत्तम उपाय है। विद्वानों द्वारा उपरोक्त सात उपाय निंदा से बचने को दिखाये गये हैं।

ग्राम हिनौतिया, गुना
मो.9993269165

रघुकलश

सामाजिक बंधुओं से विशेष आग्रह

रघुकलश केवल एक पत्रिका मात्र नहीं बल्कि सामाजिक आंदोलन है जिसमें समाज की प्रतिभाओं को आगे लाने के लिए एक मंच प्रदान किया जाता है और सामाजिक बुराइयों एवं कुरीतियों से किस प्रकार छुटकारा पाया जाए इससे संबंधित आलेखों पर विशेष जोर दिया जाता है। सामाजिक विवाह योग्य युवक–युवतियों का परिचय जबसे पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ तभी से निशुल्क प्रकाशित किया जाता रहा है, लेकिन कागज, मुद्रण आदि के व्यय में पिछले कुछ सालों से अत्याधिक वृद्धि हुई है, इस कारण पत्रिका के अगले अंक से इसमें प्रकाशित होने वाली सामग्री का नाममात्र का शुल्क लिया जाएगा। आशा ही नहीं पूरा भरोसा है कि इसमें सभी सामाजिक बंधुओं का पूरा सहयोग हमें मिलेगा।

रंगीन पृष्ठों पर छपने वाले वैवाहिक विज्ञापन का शुल्कएक बार के लिए मात्र 500 रुपये प्रति अंक तथा श्वेत–श्याम पृष्ठों पर विज्ञापन की राशि मात्र 250 रुपये प्रति अंक होगी। विज्ञापन सामग्री और फोटो निम्न ई–मेल पते पर भेजें– raghukalash@gmail.com and arun.patel102@gmail.com या व्हाटसएप नम्बर 9425010804.

विज्ञापन शुल्क की राशि स्टेट बैंक आफ इंडिया के बचत खाता क्रमांक–**63000162757** या सेंट्रल बैंक आफ इंडिया के बचत खाता क्रमांक **3107369760** में जमा कर बैंक स्लिप अवश्य भेजें।

संपादक रघुकलश

रिश्तों में पड़ती दरार: कारण और निवारण

इंजी. शम्भू सिंह रघुवंशी

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसे समाज में रहना पड़ता है। समाज के बिना हमारा गुजारा नहीं हो सकता इस समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार होती है। सर्वप्रथम हमें अपने परिवार को ही सहेजकर रखना होगा। आज हमारे परिवार में ही रिश्तों में दरार आ रही है। बाप-बेटे, सास-बहू, भाई-भाई के बीच ही समन्वय नहीं रहा। रिश्तों में दरार का कारण मुख्यत: पीढ़ियों के बीच का वैचारिक रुप से सहमति नहीं होना है। दोनों ही अपने मनोभाव एक-दूसरे पर थोपना चाहते हैं।

बच्चे वर्तमान परिवेश में जीना चाहते हैं और माता-पिता अपने अनुभवों के हिसाब से इन्हें चलने की प्रेरणा देते हैं, नहीं मानने पर इसे अपना अपमान समझते हैं। यही मानसिकता धीरे-धीरे परिवार में दरार और रिश्तों में खटास उत्पन्न करती है और परिवार के विघटन का कारण बनती है।

कुछ पारिवारिक संस्कारों और संगति के ऊपर भी निर्भर करता है। हमारा किस संस्कृति संस्कारों से लगाव रहा है, कैसे संस्कार मिले हैं, बच्चों की शिक्षा दीक्षा कैसे माहौल में हुयी है, इनकी संगति कैसी है आदि विषयों का भी रिश्तों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। आधुनिक वातावरण में मनुष्य एकाकी होता जा रहा है। मोबाइल संस्कृति के आने से अधिकांश लोग इसी में रचते-बसते जा रहे हैं। अत: हमें सर्वप्रथम स्वयं को अपने आदर्श के रुप में बच्चों के सामने प्रस्तुत होना पड़ेगा। तत्पश्चात बच्चों से कुछ कहने का अधिकार रख पायेंगे। बच्चों में अच्छे संस्कार विकसित करना होंगे, उनकी दैनिक दिनचर्या और संगति का विशेष ध्यान रखना होगा।

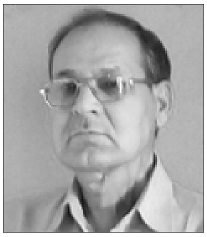

जितना संभव हो सके स्वयं टेलीविजन एवं मोबाइल से दूर रहे। अपना अधिकांश समय बच्चों के साथ बितायें, उन्हें व्यवहारिक ज्ञानानुभूति करायें, अच्छी प्रेरक कहानियों से उनका मनोरंजन कराते हुए उनका समयानुसार मार्गदर्शन करते चलें। बच्चों के गुरु, सहपाठी कैसे हैं, कैसी शिक्षा ले रहा है समय-समय पर देखते रहें। बच्चे की प्रथम गुरु माँ होती है अत: माँ को इसे उत्तम संस्कार देने की महती आवश्यकता है। हमें पहले स्वयं अपने अंतरतम में झांकना होगा कि हम कैसे अपने चरित्रों को जी रहे हैं, अपने रिश्ते निभा रहे हैं, तभी हमारा और भावी पीढ़ियों का भविष्य निर्माण होगा।

मगराना गुना , म.प्र. मो. 9425762471

कविता

इंजी. शम्भू सिंह रघुवंशी

संसार

हम सब ही संसारी जन प्रभु जी, हैं सभी पुष्प तेरी फुलबगिया के।
आज सभी पुलकित हैं प्रभु जी, कब रुखसत हो जायें दुनिया से।।
सृष्टि के रचैया तुमहि हो भगवन, जो जब चाहें सब कर सकते हो।
हमें सुखी रखें या दुखी रखें आप, जब मन भाये तुम कर सकते हो।
क्या कर्म धर्म सब आप जानते, भाव स्वभाव सभी आप जानते।
सब कुछ ही अब प्रभु तेरे हवाले, तुम अंतर्यामी प्रभु सबही जानते।
हैं अनेक विचार भाव व्यवहारी, बहुत विविधताएं हैं बांकेबिहारी।
मन मानस सब अलग अलग हैं, प्रेमपुंज कुछ यहां कपटी संसारी।
आवागमन सब नियति करतूति, करें संसार हम अनेक अनूभूति।
किसी के मन की मैं क्या जानूँ, ना सुहाए हमें कोई पराई विभूति।

धरती

नमन करें हम धरती माता, तुझे सबजन शीश नवाएं।
सब कुछ पाते हैं तुझसे माँ, स्वर्ण अन्न बख्शीश पायें।
प्राणवायु मिलती प्राकृतिक, गंगा सरिताएं सुधा पिलाती।
धरती माँ कितना कुछ देती, यह हम सबको मुधा दिलाती।
हम धरती की संतान हैं माते, पीयूषपान तेरी छाती से करते।
समझे नालायक स्वयं को जो, नहीं अभिमान थाथी से रखते।
महावीर, महापुरुष महारथी जाया, ये भारत की धरती है गौरवशाली।
शत-शत नमन वंदन करते हैं माते, जन्मे धरती पर जो है वैभवशाली।
जनमन मनोरंजन सब करते यहां, लेकिन तेरा ध्यान मान नहीं रखते।
तोड़फोड़ संरचनाओं का कर हम, सीना छेदकर सम्मान नहीं करते।

मगराना गुना , म.प्र. मो. 9425762471

विश्व में रामराज्य की अभिलाषा

प्रो. सारंगा दिलीपसिंह रघुवंशी

भगवान श्री नारायण ने मत्स्य, कर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बौद्ध व कलगी जैसे दस अवतार लिए हैं। कलयुग में अपने को मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की आराधना करना अत्यावश्यक है, क्योंकि राम का चरित्र उच्चकोटि का है। उन्होंने आदर्श गृहस्थ जीवन, आदर्श राजधर्म, आदर्श पारिवारिक जीवन, आदर्श पतिव्रत धर्म, आदर्श बंधु प्रेम यही नहीं अपितु इसके साथ ही साथ अन्य बहुत सारे आदर्श भगवान राम के जीवन दर्शन में देखने को मिलते हैं। आदर्श के साक्षात उदाहरण के तौर पर श्रीराम के जीवन को माना जा सकता है। असलियत में इसी आदर्श को अपनाने की आज जरुरत है। वर्तमान काल में चारों ओर एक प्रकार से हड़कम्प मचा हुआ है। सब तरफ दुख और अशांति बिखरी पड़ी है। दुनिया में चारों ओर आपसी झगड़े चालू हैं, विज्ञान की शक्ति को विनाश के लिए उपयोग में ला रहे हैं। रोज नये-नये अनुसंधान हो रहे हैं परन्तु सुख-शांति नहीं है।

जगत में सुख व शांति लाने के लिए राम का आदर्श अपने आप अपनी आंखों के सामने लाना होगा। आपस में प्रेमभाव पैदा करने के लिए रामायण को सही संदर्भ व अर्थों में समझना होगा, न केवल समझना होगा बल्कि हमें उसे अपने जीवन में अमल में भी लाना होगा। भाई-भाई में बंधु प्रेम बढ़ने के लिए राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न ये चारों भाई आपस में कैसे बर्ताव करते थे यह भी देखना पड़ेगा। पति और पत्नी में कैसे संबंध थे ये राम व सीता के चरित्र में से देखना व समझना होगा। बच्चों को अपने माता-पिता से कैसे संबंध रखना चाहिए, यह भी देखना पड़ेगा और उसे जीवन में उतारना होगा। हम यह देख सकते हैं कि वाल्मिकी ऋषि के कितने उपकार हैं। उन्होंने रामायण ग्रंथ लिखकर उसमें रामचरित का आदर्श जीवन कैसा होता है यह चित्रित किया है।

रामराज्य में चारों तरफ सुखमय वातावरण था, कभी भी किसी को किसी बात की कमी नहीं थी। किसी प्रकार का भय का वातावरण नहीं था। आज की तरह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक वातावरण नहीं था। ऐसे रामराज्य की एक बार पुनः स्थापना के लिए अपने आपको स्वयं से ही बदलाव लाने के लिए शुरुआत करना चाहिए। वक्त का इंतजार अब समाप्त हुआ है, रामराज्य निर्माण होना अति आवश्यक है। राम खुद भी श्रीनारायण का अवतार थे, त्रैलोक्य स्वामी थे परन्तु उन्होंने अपने जीवनकाल में कोई चमत्कार और उसकी विराट शक्ति एक बार भी नहीं दिखाई। उन्होंने आम आदमी का जीवन जिया और अपनी जिन्दगी बिताई। स्वयं नारायण स्वरुप होने के बावजूद उनके लिए रावण को मारना कुछ कठिन नहीं था, एक क्षण में वे रावण को खत्म करके माता सीता को वापस ला सकते थे, परन्तु उन्होंने सभी काम सामान्य मनुष्य की तरह किए। यह उनके जीवन का महत्वपूर्ण भाग है। अपनी आंखों के सामने राम यानी सुंदर मूर्ति, राम यानी मूर्ति नहीं, व्यक्ति नहीं या केवल शक्ति नहीं, बल्कि राम यानी विराट चैतन्य शक्ति का रुप है। इसी चैतन्य शक्ति से अनन्त विश्व-निर्माण हो रहे हैं। ये विश्व कुछ काल स्थिर रहकर लुप्त हो जाते हैं और फिर निर्मित हो जाते हैं। राम का रुप अनन्त और अनेक हैं, परन्तु वे हैं एक ही। उनका सामर्थ्य चकित करने जैसा है। वे ऐश्वर्य से पटे हुए हैं। पर्वत, नदी-नाले, समुद्र इन सभी में राम बसे हुए हैं यानी कण-कण में राम का अस्तित्व है। वे ज्ञान स्वरुपानंद हैं, वे अनन्त और आनंददायक स्वरुपों में पूरे विश्व में रचे-बसे हुए हैं।

सूर्य आकाश में स्व-तेज से चमकता है। जो नेत्रहीन हैं वे सूर्य नहीं देख पाते, यह उनका स्वयं का दोष है यानी जो सूर्य को नहीं देख पाता वह उनका दोष है। लेकिन जो लोग सूर्य की दिशा को देखते हैं उनको सूर्यदेवता स्पष्ट नजर आते हैं। इसी प्रकार राम का व्यक्तित्व स्वयं के प्रकाश से आलोकित है। जो मानते हैं कि वे भगवान नहीं हैं और यदि आंखे बंद कर लेते हैं तो उनको भगवान दिखना मुश्किल है, वे भगवान को मानते नहीं हैं। कुछ लोग आस्तिक होते हैं, भगवान विश्व में हैं ऐसा मानते हैं वे संसार में मग्न हो जाते हैं। संसार से समय निकाल कर जिसको सब कुछ दिखाई देता है उसके पास सदगुरु का आशीर्वाद होता है, कृपा होती है, सदगुरु उसको मार्ग दिखाते हैं। भगवान को पाने के लिए भगवान की उपासना करना सीखना होता है। अपने को राम के निकट और नजदीक आना चाहिए। भगवान और मैं एक ही हैं, ऐसे भाव लेकर उपासना करना चाहिए। सन्त तुकाजीराम महाराज ने जो मराठी में कहा है उसका हिन्दी भावार्थ इस प्रकार है- राम, कृष्ण, वेंकटेश और सभी भगवानों के नाम भिन्न-भिन्न हैं पर वे सब एक ही हैं, यह हमें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। श्रीराम हिन्दू के श्रद्धेय हैं, श्रीराम की पूजा सदगुण और आदर्श की पूजा है। शिव यानी कल्याण और अपने को कल्याण प्राप्त करने के लिए राम को अपनाना आवश्यक है। श्रीराम का आदर्श जीवन में लाना आवश्यक है।

शेष अगले पृष्ठ पर

आपके आसपास कैसे लोग हैं सकारात्मक या नकारात्मक

ओमवीर सिंह रघुवंशी

नकारात्मक लोगों का साथ एक जघन्य अपराध है। क्या आपने कभी सोचा है कि हार, असफलता, मुश्किल और बाधा जैसे शब्द और विचार हमारे दिमाग में आते कहां से हैं। हमारे अपने परिवार और आसपास में ऐसे लोग होते हैं जो जाने-अनजाने आपने आचरण और शब्दों से हमारे भीतर भय भर देते हैं। वे अक्सर हमारी क्षमताओं को कम करके आंकते हैं।

अपनी आंखें बंद कीजिए, अपने परिवारजनों, सहयोगियों और मित्रों की बातें याद कीजिए। आपके आसपास कैसे लोग हैं सकारात्मक या नकारात्मक गंभीरता से सोचेंगे तो आपको स्वयं ही दो तरह के लोग नजर आयेंगे।

प्रथम ग्रुप– मुश्किल, असंभव नहीं हो पायेगा, लोग क्या कहेंगे, दूसरे हमसे बेहतर हैं, हमारा भाग्य खराब है, मॉ-बाप ने हमारे लिए कुछ नहीं छोड़ आदि शब्द उपयोग में लाते हैं।

द्विवतीय ग्रुप– शानदार बेहतरीन, बहुत अच्छा काम किया, रुकना मत, तुम कर सकते हो, दूर किस बात की है, आगे बढ़ो आदि शब्द उपयोग में लाते हैं।

पहले ग्रुप से मिलकर आपका उत्साह मंद हो जायेगा। आप चिंतित, निराश और हारा हुआ महसूस करेंगे। आपका आत्मविश्वास डगमगा जायेगा और आप अपनी महत्वपूर्ण योजनाओं को टाल देंगे। वहीं दूसरे ग्रुप से मिलकर आप उत्साहित महसूस करेंगे। कुछ कर गुजरने की लालसा पैदा होगी, नए विचार होंगे, उमंग होगी और आत्मविश्वास बढ़ जायेगा। आप तेजी से नयी योजनाओं को कार्यान्वित करेंगे। सोचिए, पहले ग्रुप के लोगों से मिलकर अपने सपनों, आकांक्षाओं और इच्छाओं का गला घोंटना कहां तक उचित है। इनसे बचिए, दूर रहिए, सलाह मत लीजिए, क्योंकि नकारात्मक लोग वायरस की तरह होते हैं, अनजाने में आपको गिरफ्त में ले लेते हैं। मैं व्यक्तिगत जीवन में नकारात्मक व्यक्तियों से सलाह नहीं लेता, मैं उनके पास नहीं जाता, उनके साथ समय नहीं बिताता। जिस प्रकार रंग की एक बूंद सैकड़ों लीटर पानी को रंगीन कर देती हैं, उसी प्रकार एक नकारात्मक व्यक्ति बड़े-बड़े कार्यों का विध्वंस कर देता है। ये पंक्तियां आपने सुनी होंगी।-

निंदक नियरे राखिए, आंगन कुटी छबाय,
बिन पानी, बिन साबुना, निर्मल करे सुभाय।।

हमने इन पंक्तियों का शक्तिशाली रुपांतरण किया है।-

प्रेरक नियरे राखिए, आंगन कुटी छबाय
हौंसला दे, प्रेरणा दे, जीत का रास्ता सुझाय।

क्या आप चाहते हैं कि ऐसा ही कोई नकारात्मक व्यक्ति आपकी उम्मीदों, आकांक्षाओं और सपनों को तोड़ दे। अपने जीवन को ऐसे हाथों में मत सौंपिए जो आपको नीचे ले जाए और हीन महसूस कराये।

जब भी आप चिंतित हों, यह सोचिए क्या समस्या का समाधान मेरे हाथ में हैं? तो चिंता छोड़ समाधान की ओर बढ़िए और यदि समाधान हाथ में नहीं है तो चिन्ता का कोई अर्थ नहीं है। नकारात्मक लोगों से सौ प्रतिशत दूर रहने का प्रयास करें। परनिंदा, आलोचना में ऊर्जा नष्ट न करें। एक विजेता की तरह अपनी क्षमताओं पर भरोसा करें और मैं कर सकता हूं की भावना रखें। अपने आप से हर रोज वादा करें कि मैं जो भी कार्य करुंगा, उसमें कोई भी समझौता नहीं करुंगा, अपना सर्वश्रेष्ठ दूंगा।

जीत या हार, रहो तैयार से साभार।

आरोन, जिला गुना, मोबा.9893247389

पछिले पृष्ठ का शेष

त्याग, पवित्र पितृ प्रेम, बंधु प्रेम, राष्ट्र प्रेम क्या होता है यह रामचरित मानस से सीखना चाहिए। केवल राम का जन्मोत्सव मनाने से काम चलने वाला नहीं है। हर साल रामनवमी का अवसर आता है, भजन कीर्तन और राम विजयगाथा का परायण होता है। अपने में कोई प्रगति होना चाहिए वह सच्चा उत्सव होता है। आने वाली पीढ़ी को राम का व्यक्तित्व कैसा था यह समझाना होगा और रामचरित के माध्यम से इसे भलीभांति समझा जा सकता है। छोटे बच्चों को बताने के पहले उनको सब कुछ समझाना होगा।

संपर्क-प्राचार्य, दिलीपसिंह रघुवंशी, कनिष्ठ महाविद्यालय हरताला, जि-अमरावती, महाराष्ट्र, मोबाइल-09422542289

मानवजाति का उपकार

मानवजाति की भलाई और उपकार कैसे हो, यह एक ऐसा गूढ़ प्रश्न है जो अक्सर चिंतन का विषय होता है। इस विषय में श्रीअरविंद आश्रम पांडिचेरी की श्रीमॉ ने विस्तार से प्रकाश डालते हुए कहा है कि जो व्यक्ति पूर्णयोग की साधना करना चाहता है उसके लिए मानवजाति की भलाई अपने आपमें लक्ष्य नहीं हो सकती, यह तो केवल एक परिणाम और फल है और अगर मानव-अवस्थाओं को सुधारने के समस्त प्रयत्न, उन्हीं अवस्थाओं के द्वारा प्रेरित तीव्र उत्साह और लगन के होते हुए भी, अन्त में बुरी तरह असफल ही हुए हैं तो इसका कारण यह है कि मानव जीवन की अवस्थाओं का रुपान्तर, अर्थात् मनुष्यों की चेतना का रुपान्तर साधित हो जाये या कम से कम उन थोड़े से विशेष व्यक्तियों की चेतना का रुपान्तर तो हो ही जाये जो एक अधिक व्यापक रुपान्तर का आधार तैयार कर सकते हों।

श्रीमॉ कहती हैं कि इस विषय पर हम थोड़ी देर बाद आयेंगे, यह हमारे विषय का उपसंहार होगा। पहले तो मैं इसके दो प्रभावशाली दृष्टांतों के विषय में कुछ कहूंगी जो सच्चे परोपकारी व्यक्तियों के दृष्टान्तों से लिये गये हैं। ये दो दृष्टान्त दो प्रसिद्ध व्यक्तियों के हैं जो विचार और कर्म के दो छोरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन दो उत्कृष्ट मानव-आत्माओं ने, जिनकी अभिव्यक्ति एक संवेदनशील एवं दयालु हृदयों के रुप में हुई थी, मानवजाति का कष्ट अनुभव किया और उनकी अन्तरात्माओं में एक-सा संवेदन उत्पन्न हुआ। दोनों ने अपना समस्त जीवन अपने मनुष्य साथियों के कष्ट निवारण के उपाय की खोज में अर्पण कर दिया और दोनों का यह विश्वास था कि उन्होंने यह उपाय ढूंढ निकाला है। किन्तु दोनों के समाधान, जो परस्पर विरोधी कहे जा सकते हैं, अपने-अपने ढंग से अपूर्ण और आंशिक होने के कारण असफल रहे और मनुष्य के कष्ट भी वैसे के वैसे ही बने रहे।

एक उदाहरण पूर्व का है- राजकुमार सिद्धार्थ का जो बाद में बुद्ध कहलाये और दूसरा पश्चिम का- श्री वैंसा का, जिन्हें उनकी मृत्यु के बाद लोगों ने सन्त वैंसा द पॉल की उपाधि दी। कहा जा सकता है कि ये दोनों मानवीय चेतना के दो छोरों पर स्थित थे। इनके उपकार के ढंग पूर्णतया एक-दूसरे के विरोधी थे, फिर भी दोनों का यह विश्वास था कि मुक्ति आत्मा के द्वारा, उस परम सत्ता के द्वारा ही हो सकती है जो विचार से परे है, एक उसे भगवान कहते थे और दूसरे निर्वाण। सन्त वैंसां द पॉल का विश्वास अत्यन्त उत्कट था और उन्होंने अपने साथियों को भी यही उपदेश दिया कि मनुष्य को अपनी आत्मा की रक्षा करनी चाहिये। किन्तु जब वे मानवीय दुखों के सम्पर्क में आये तो उन्हें शीघ्र ही ज्ञात हो गया कि आत्मा की प्राप्ति के लिए मनुष्य के पास उसे खोजने के लिए समय होना चाहिये।

जिन लोगों को प्रातः से सायं तक और कभी-कभी सायं से प्रातः तक भी, जरा सी कमाई के लिए, जो उन्हें जीवित रखने के लिए भी शायद ही पर्याप्त होती हो, कठोर परिश्रम करना पड़ता है, उन्हें अपनी आत्मा के विषय में सोचने का अवकाश ही कहां मिलता है? तब वे अपने दयालु हृदय की सरलता के साथ इस निर्णय पर पहुंचे कि जिन लोगों के पास आवश्यकता से अधिक धन है, वे यदि कम से कम, गरीब लोगों की अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा कर दे ंतो दुःखी लोगों को अच्छा जीवन व्यतीत करने के लिए समय मिल सकता है। वे सामाजिक कार्यों के गुण तथा प्रभाव में, एक सक्रिय एवं भौतिक उपकार में विश्वास रखते थे। उनकी यह धारणा थी कि दुख का अन्त तभी हो सकता है जब अधिकतर व्यक्ति कष्ट से मुक्त हो जायें, अधिक से अधिक व्यक्तियों का, अधिकतम व्यक्तियों का दुख मोचन हो जाये। किन्तु यह केवल शामक औषध है, दुख का इलाज नहीं।

तथापि जिस पूर्ण लगन और आत्म-त्याग के साथ सन्त वैंसां ने अपना कार्य किया था उसने इन्हें मानव इतिहास में एक अत्यधिक उज्जवल और प्रभावशाली व्यक्ति बना दिया। किन्तु फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि उनके प्रयत्नों ने दीन और असहाय मनुष्यों की संख्या बढ़ाई ही, घटायी नहीं। यह सत्य है कि उनके उपदेशों का एक बड़ा ठोस परिणाम यह हुआ कि धनिकों के एक विशेष वर्ग के मन में उपकार की एक दृढ़ भावना

उत्पन्न हो गयी और इसी कारण जिन लोगों का उपकार किया गया उनकी अपेक्षा उपकार करने वालों को अधिक लाभ पहुंचा।

चेतना के ठीक दूसरे छोर पर थे उच्च और पावन करुणा वाले बुद्ध। उनके अनुसार कष्ट जीवन का ही परिणाम है और वह जीवन को नष्ट करने से ही नष्ट हो सकता है। क्योंकि जगत और जीवन मनुष्य की जीवित रहने की इच्छा का परिणाम एवं अज्ञान का फल है, इच्छा का नाश करो, अज्ञान को दूर करो और तब जगत और उसके साथ ही साथ दुख और कष्ट भी विलुप्त हो जायेंगे। एकाग्रता के महान प्रयत्न के द्वारा उन्होंने एक साधना का, एक ऐसी उच्चतम और अत्यन्त प्रभावशाली साधना का विकास किया जो मुक्ति के पिपासुओं को इससे पहले कभी उपलब्ध नहीं हुई थी। लाखों मनुष्यों ने उनकी शिक्षा को स्वीकार किया, यद्यपि ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम थी जो उसे व्यवहार में भी ला सकते हों। किन्तु संसार की अवस्था अब भी वैसी ही है, मानवीय कष्टों में कहीं भी कोई विशेष कमी दृष्टिगोचर नहीं होती।

फिर भी लोगों ने उनके प्रति कृतज्ञता और सम्मान का भाव प्रकट करने के लिए एक को सन्त की उपाधि प्रदान की है और दूसरे को देवता का पद। किन्तु बहुत ही कम ऐसे व्यक्ति होंगे जिन्होंने सच्चे दिल से उस शिक्षा या आदर्श को, जो उनके सामने रखा गया था, व्यावहारिक रुप देने का प्रयत्न किया हो, यद्यपि ऐसा करना ही कृतज्ञता प्रदर्शन का एकमात्र वास्तविक तरीका है पर यदि ऐसा हुआ भी होता, फिर भी मनुष्य जीवन की स्थिति में कोई प्रत्यक्ष सुधार न होता। कारण, सहायता करना कोई इलाज नहीं है, न ही पलायन का अर्थ है विजय। शारीरिक कष्टों का निवारण- यह समाधान सन्त वैंसां द पॉल का था- किसी भी प्रकार मनुष्यों को उनके दुखों और कष्टों से मुक्त नहीं कर सकता, कारण समस्त मानव कष्ट भौतिक अभावों से ही नहीं उत्पन्न होते और न ही केवल बाह्य साधनों द्वारा दूर किये जा सकते हैं। बात इससे बिलकुल दूसरी है, शारीरिक कुशल क्षेम से ही आवश्यक रुप में सुख और शान्ति नहीं मिलती, दरिद्रता भी आवश्यक रुप में कोई दुख का कारण नहीं है, जैसा कि उन तपस्वियों के उदाहरण से स्पष्ट है जो दरिद्रता को अपनाते थे, जो अपनी अकिंचनता को ही पूर्ण शान्ति और आनंद का स्त्रोत एवं कारण समझते थे।

ऐसे उदाहरण सभी देशों में मिलते हैं। इसके विपरीत संसार के सुखों का उपभोग भी उन सब सुखों का जिन्हें भौतिक धन सुख, आराम और बाह्य संतोषों के रुप में अपने साथ लाता है- उस मनुष्य को दुख और कष्ट के आक्रमण से नहीं बचा सकता जिसके पास ये सब वस्तुयें हों।

दूसरा समाधान, जो बुद्ध का है अर्थात, जीवन से पलायन भी समस्या का हल नहीं कर सकता। यह मान भी लिया जाये कि बहुत से व्यक्ति इस साधना का अभ्यास करके अन्तिम मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं, फिर भी इसके द्वारा पृथ्वी से दुख का लोप नहीं हो सकता, न ही दूसरों के, अर्थात उन सबके कष्ट ही दूर किये जा सकते हैं जो अभी इस निर्वाण पथ का अनुगमन करने में समर्थ नहीं।

-अमृतसंदेश रायपुर से साभार

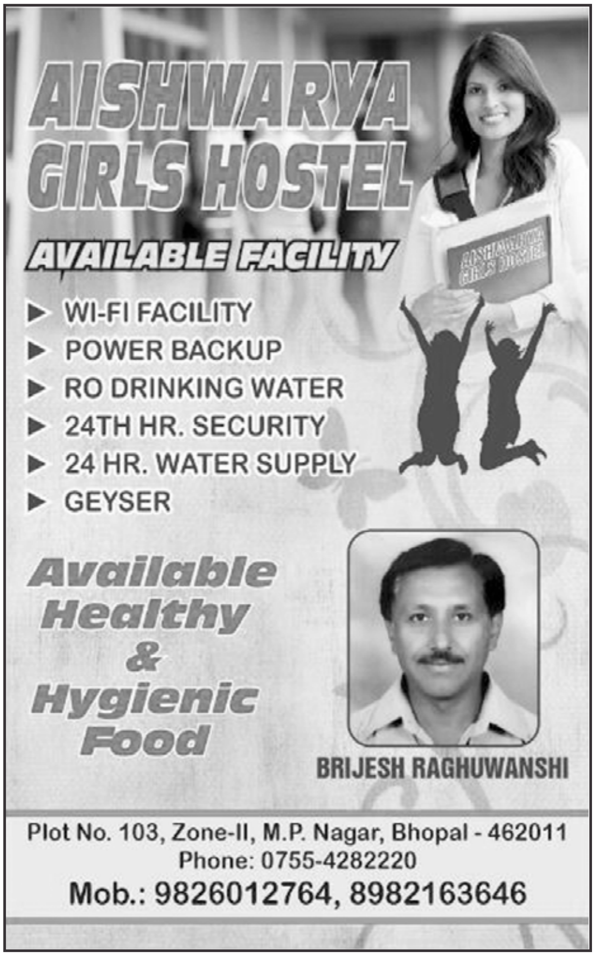

हमारे अंदर छिपी हैं अनन्त संभावनाएं

हर आदमी हमेशा कुछ न कुछ प्रगति करना चाहता है लेकिन बहुत कम लोग हैं जो अपने अंदर की आवाज को पहचान कर आगे बढ़ते हैं और सफलता उनके कदम चूमती है। वैसे हर आदमी के अंदर अनन्त संभावनाएं छिपी हुई हैं लेकिन उसके ऊपर अज्ञानता, जड़ता व अकर्मण्यता की परत चढ़ी होती है, इसे हटाकर संभावनाओं को जो खोज लेता है वही आगे बढ़ता है। महर्षि श्रीअरविंद और श्रीमॉ के विचारों के आलोक में यदि हम खोजेंगे तो पायेंगे कि आदमी के अंदर छिपी हुई संसार की संभावनायें उसी तरह प्रतीक्षा कर रही हैं जैसे एक पेड़ बीज में प्रतीक्षा करता है। प्रार्थना, महानक्रिया और राजोचित विचार मनुष्य के बल को परात्पर शक्ति के साथ जोड़ सकते हैं। मनुष्य की अन्तरआत्मा उसकी नियति से अधिक महान है। जीवन के पीछे और उसके अंदर एक नीरवता होती है और इसी अधिक गुप्त रहस्यमय सहारा देने वाली नीरवता में एकाग्रचित्त होकर यदि हम प्रयास करेंगे तो भगवान की वाणी स्पष्टता से सुन सकते हैं। वास्तव में हमें उन गुणों को पाकर ही संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिए जिनकी लोग प्रशंसा करते हों या जिन पर पुरस्कार देते हों। इसके स्थान पर गुण ऐसे होना चाहिए जो हममें पूर्णता लाते हैं और हमारी प्रकृति में भगवान जिसकी मांग करते हैं।

आदमी सामान्यतः पूजा-पाठ और आराधना करता है लेकिन सच्ची आराधना वही है कि जिसकी हम आराधना करते हैं वही बनने की कोशिश भी करते जायें। मतलब साफ है कि उसके गुणों को अंगीकार करते जायें। अक्सर यह देखने में आया है कि सफलता से हम आशक्त हो उठते हैं और जरा सी असफलता मिलते ही एकदम घबरा जाते हैं। वास्तव में ऐसा नहीं होना चाहिए बल्कि हर परिस्थिति में अविचलित रहते हुए शांति व दृढ़ता के साथ आगे बढ़ना चाहिए। ऐसा करते समय यह निश्चय मन में रखना चाहिए कि हमें दिव्य शक्ति की सहायता अवश्य मिलेगी और वह हमें कभी निराश नहीं करेगी। महर्षि श्रीअरविंद कहते हैं कि श्रीमॉ की सतत् उपस्थिति अभ्यास से आती है और साधना में सफलता के लिए भागवत कृपा आवश्यक है लेकिन अभ्यास भागवत कृपा के अवतरण के लिए तैयारी करता है इसलिए निरंतर अभ्यास करते रहना चाहिए।

देखने में यह आया है कि आदमी बाहरी शान-शौकत, आडम्बर और दिखावे के बीच बाहरी जीवन जीना चाहता है जबकि श्रीअरविंद का कहना है कि हमें इन बाह्य वस्तुओं के चक्कर में नहीं पड़ता चाहिए और उनमें जीना बंद कर देना चाहिए। हमें अंदर जाना सीखना चाहिए और केवल बाह्य चीजों में जीना बंद कर देना चाहिए तथा अपने अंदर श्रीमॉ के कार्य के बारे में अभिज्ञ होने के लिए अभीप्सा करो। श्रद्धा एक ऐसी चीज है जो हमारे अंदर प्रमाण या ज्ञान से पहले होती है और वह ज्ञान या अनुभूति तक पहुंचने में हमेशा हमारी सहायता करती है। भले ही हमारे पास इस बात का कोई प्रमाण न हो कि भगवान हैं लेकिन अगर हमें भगवान पर श्रद्धा है तो हम अवश्य ही भगवान की अनुभूति तक पहुंच सकते हैं। भले ही हम सक्रिय रुप से माताजी की शक्ति को न भी बुला सकें तब भी हमें भरोसा रखना चाहिए कि वह आयेगी। यह भी याद रखना चाहिए कि निरंतर आंतरिक विकास होते रहने पर ही मनुष्य जीवन में सतत् नवीनता और अक्षय रस पाया जा सकता है। इसके अलावा कोई अन्य संतोषजनक उपाय नहीं है। अपनी प्राणसत्ता के दरवाजे पर यह यह नोटिस चस्पा कर दो कि ‘‘कोई मिथ्यात्व यहां कभी प्रवेश न करे‘‘ और वहां अपनी प्राणशक्ति के बाहर एक ऐसा संतरी तैनात कर दो जो यह निगरानी रखे कि उसका पालन किया जा रहा है।

यदि हमें किसी बाहरी परिवर्तन की आवश्यकता महसूस होती है तो इसका साफ मतलब यह है कि हम आंतरिक रुप से उन्नति नहीं कर रहे हैं, क्योंकि जो व्यक्ति आंतरिक रुप से उन्नति करता है वह सर्वदा एक ही प्रकार की बाहरी अवस्थाओं में रह सकता है। हर क्षण यह जानने के लिए कि क्या करना चाहिए, कैसे करना चाहिए, बाहर सहारा ढूंढने की जगह यदि भागवत ज्ञान पर एकाग्र हो जायें और प्रार्थना करें, स्वयं जो कुछ हो उसे दे दें और जो कुछ करें पूर्णता पाने के लिए करें तो हमें अनुभव होगा कि सहारा मौजूद है और रास्ता दिखा रहा है। हमेशा आदमी के मन में पूर्णता की प्यास बनी रहती है लेकिन उस मानव पूर्णता की नहीं जो अहंकार की पूर्णता है और दिव्य पूर्णता में बाधा देती है, उस एकमात्र पूर्णता की जिसमें शाश्वत शक्ति को धरती पर प्रकट करने की शक्ति है।

विरोधी शक्तियों को संसार में सहा जाता है क्योंकि वे मनुष्य की सच्चाई की परख करती हैं इसलिए हमारी परख होती रहे, हमें विरोधी शक्तियों को सहने की ताकत रखना चाहिए। जिस दिन मनुष्य पूरी तरह सच्चा हो जाएगा विरोधी शक्तियां अपने आप चली जायेंगी क्योंकि तब उनके अस्तित्व का कोई कारण ही नहीं रह जाएगा। अगर हम अपनी श्रद्धा को अटल और अपने हृदय को हमेशा दिव्य शक्ति के प्रति खुला रखेंगे तो चाहे कितनी ही बड़ी कठिनाई क्यों न आये भगवती शक्ति हमारी सत्ता को अधिक पूर्ण बनाने में योगदान देगी। हमें कभी भी छोटे-मोटे अनिष्टों के लिए

अपने आपको संताप नहीं पहुंचाना चाहिए। हम यदि बहुत शान्त बने रहेंगे और शान्तचित्त होकर रहेंगे तो यह दुर्घटनायें आगे नहीं होंगी। अपने मन में अंतिम विजय की निश्चिती को हमेशा बनाये रखेंगे तो रास्ता ज्यादा छोटा हो जाएगा।यह कहीं अधिक उपयुक्त होगा कि हम अपनी वाणी पर संयम रखें और दूसरी तथा खतरनाक विषयों पर बोलने से इन्कार कर दें। सुखी व सफल जीवन के लिए पहली शर्त यह है कि व्यक्ति को अपने स्वार्थ को अपना उद्देश्य नहीं बनाना चाहिए। उसके लिए पहली आवश्यकता योग्यता व गुण होना चाहिए तथा निर्भीकता, साहस और अद्यवसाय। पूर्ण विश्वास और कृतज्ञता के साथ अपने आपको भगवान के सामने पूरी तरह समर्पित करने से ही कठिनाइयों को जीता जा सकता है। अपने जीवन पथ पर चलते हुए मनुष्य जो पहली बात सीखता है वह यह है कि देने का आनंद लेने के आनंद से बहुत अधिक है। सब कार्यों को अनुभव का एक विद्यालय होना चाहिए और इसी भावना से हमें अनुभव प्राप्त करते रहना चाहिए।

अगर हम दत्तचित्त होकर पूरी शांति के साथ अपनी चेतना से सारी पराजयवादी मनोवृत्ति को भगा पाये तो हम सिद्धि की ओर एक बहुत बड़ी छलांग लगा पायेंगे। जब हमारे चारों ओर हमें घनघोर अंधेरा नजर आये तब उन अंधकारपूर्ण दिनों में श्रद्धा ही सबसे बड़ी निरापद पथ-प्रदर्शक होती है। धीरता, व स्थिरता आशावादी मार्ग में हमारी सबसे बड़ी सहायक होती है। भगवान की ओर मुड़कर किसी शारीरिक अपूर्णता को दूर करने के लिए प्रार्थना करना किसी अनैतिक दोष के निवारण की प्रार्थना के समान ही है। काम शुरु कर दें और श्रद्धा बनाये रखें तो हमारी आवश्यकता के अनुसार शक्ति आयेगी। हमारी ग्रहणशीलता और हमारी श्रद्धा व विश्वास पर निर्भर है। संसार की सारी असाधारण शक्तियों से कहीं अधिक बढ़कर है एक सच्चा निष्कपट हृदय। जो हमारा भला करता है उससे नाराज न होने के लिए चरित्र की उदात्तता की नितांत जरुरत है।

-अमृतसंदेश रायपुर से साभार

किशोर रघुवंशी बने कर्मचारी कांग्रेस संभागीय प्रवक्ता

खरगोन। मध्यप्रदेश कर्मचारी कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष वीरेन्द्र खोंगल ने किशोर शंकर सिंह रघुवंशी राधावल्लभ मार्केट खरगोन को कर्मचारी कांग्रेस की इन्दौर संभागीय इकाई में संभागीय प्रवक्ता के पद पर नियुक्त किया है। इस नियुक्ति के साथ उनसे अपेक्षा की गई की इन्दौर संभाग की सकारात्मक गतिविधियों को मीडिया के समक्ष समय-समय पर रखें क्योंकि उन्हें यह अधिकार नियुक्ति के साथ दिया गया है।

श्री रघुवंशी के संभागीय प्रवक्ता नियुक्त होने पर रघुवंशी समाज के प्रतिष्ठित गणमान्य लोगों और अभारक्षम रघुवंशी समाज के राष्ट्रीय प्रचार सचिव एवं रघुकलश के संपादक अरुण पटेल अभारक्षम के प्रांतीय महामंत्री चंदू रघुवंशी धार तथा रघुकलश के इन्दौर संभागीय ब्यूरो प्रमुख राजेश रघुवंशी तथा विशेष संवाददाता रणवीर सिंह रघुवंशी ने बधाई देते हुए उनके उज्जवल भविष्य की कामना की है।

रघु कलश के स्वामित्व एवं अन्य विवरण के संबंध में घोषणा

फॉर्म 4 (नियम 8 देखिए)

1. प्रकाशन का स्थान	:	ई 100/41 शिवाजी नगर भोपाल
2. प्रकाशन अवधि	:	त्रैमासिक
3. मुद्रक का नाम	:	अरुण पटेल
(क्या भारतीय नागरिक हैं यदि विदेशी हैं तो मूल देश)	:	हां
पता	:	प्रियंका ऑफसेट 25-ए प्रेस काम्पलेक्स, भोपाल
4. प्रकाशक का नाम	:	अरुण पटेल
(क्या भारतीय नागरिक हैं यदि विदेशी हैं तो मूल देश) पता	:	हां
5. (अ) संपादक का नाम	:	अरुण पटेल
(क्या भारतीय नागरिक हैं यदि विदेशी हैं तो मूल देश)	:	हां
पता	:	ई 100/41 शिवाजी नगर भोपाल
6. उन व्यक्तियों के नाम व जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	:	अरुण पटेल

मैं अरुण पटेल एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

अरुण पटेल

दिनांक 1.3.2019 प्रकाशक के हस्ताक्षर

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक अरुण पटेल द्वारा प्रियंका ऑफसेट, 25-ए, प्रेस कॉम्पलेक्स, एमपी नगर, जोन-1, भोपाल से मुद्रित कर ई-100/41, शिवाजी नगर, भोपाल, मप्र-462016, से प्रकाशित। **संपादक- अरुण पटेल**

फोन न.0755-2552432, मो. 9425010804, ईमेल: raghukalash@gmail.com

सभी विवादों का न्याय क्षेत्र भोपाल रहेगा। RNI No. MPHIN/2002/07269

www.rntu.ac.in

Rabindranath
TAGORE UNIVERSITY™
MADHYA PRADESH, BHOPAL *(Formerly known as AISECT University)*

AN AISECT GROUP UNIVERSITY

Approved by : AICTE, NCTE, BCI, INC, M.P. PARAMEDICAL COUNCIL | Recognized by : UGC | Member of : AIU, ACU

32 Skill Courses in India's first skill-based University

9 Centres of Excellence and Skills housed in RNTU

15 International & 30 National Level collaborations

A pool of 400+employers

State of Art Studio and Centre for e-Learning

Huge in-house funding to promote research

Where **aspirations** become **achievements!**

nirf INDIA RANKINGS 2017 (Ministry of Human Resources and Development, Govt. of India) Among all Central, State, Private & Deemed universities

Awarded ★★★★ Rating for Best University of India 2018 CAREERCONNECT

Ranked amongst India's Top 30 Private Universities 2018 INDIA TODAY

Ranked amongst Top 20 Engineering Universities in India competition success review

BEST ENGG. COLLEGE WITH AAA RANKING 2018 करियर्स 360

AWARDED WITH AAA RANKING BY CAREERS360

ANNOUNCED UNDER THE TOP 30 COLLEGES FOR PLACEMENTS CAREERCONNECT

First to establish IoT Lab by Frugal and Intel, Cloud Computing Lab by Microsoft

Established Niti Aayog's prestigious Atal Incubation Centre

Over 1000 papers and 50 books published by faculty and students

Project Unnat Bharat awarded by MHRD to the University

Excellent hostel facility, canteen and sports facilities of International standard

Publication of 2 UGC Approved Copernicus Indexed Journals

AWARDS AND ACCOLADES

Most Innovative University of Central India" by News 18

RNTU awarded Madhya Pradesh Gaurav Samman 2018

RNTU Awarded as India's first Skill based University by Career Connect Magazine 2018

ASSOCHAM INDIA Excellence in Education, Training & Development Award 2018

World Education Summit 2017 (Dubai)

A UNIT OF AISECT™ GROUP OF UNIVERSITIES India's Leading Higher Education Group

CHHATTISGARH | MADHYA PRADESH | JHARKHAND | BIHAR

ADMISSIONS OPEN 2018-19

Engineering & Technology | Management | Arts | Commerce | Computer Science & IT | Paramedical | Yoga | Science | Agriculture | Mass Communication | Law | Nursing | Education | Ph.D. & M.Phil. in selected subjects through separate entrance tests

Microsoft Ed-Vantage Platinum Partnership

Microsoft

Admission Helpline : **9893350135, 8085384458, 9827228290**

UNIVERSITY CAMPUS : Bhopal-Chiklod Road, Near Bangrasia Chouraha, Bhopal, MP, India, Ph.: 0755-6766100, 6766113

City Office: 3rd Floor, Sarnath Complex, Board Office Square, Shivaji Nagar, Bhopal - 462016, Ph.: 0755-4289606, 8109347769, Email: info@rntu.ac.in

बधाई...

सभी सामाजिक बंधुओं को रामनवमीं एवं हनुमान जयंती की हार्दिक शुभमानाएँ एवं बधाई

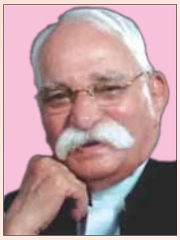
हजारीलाल रघुवंशी

पी.एस. रघु

चौ. चंद्रभान सिंह

उमाशंकर रघुवंशी

शिववरण सिंह रघुवंशी

अजय सिंह

चौरई विधानसभा क्षेत्र से निर्वाचित कांग्रेस विधायक **चौधरी सुजीत मेर सिंह** एवं कोलारस विधान सभा क्षेत्र से निर्वाचित भाजपा विधायक **वीरेन्द्र रघुवंशी** को उनके विधायक निर्वाचित होने पर हार्दिक शुभकामनाएँ एवं बधाई

चौधरी सुजीत मेर सिंह

वीरेन्द्र रघुवंशी

सौजन्य से: चन्दू रघुवंशी, प्रदेश महामंत्री अभारक्षम सागौर, धार